12

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

श्रीरामानुजाब्द—९८०  दिसम्बर—१९९६

# अनन्त सन्देश

आराध्य श्रीकृष्ण

श्रीधनुर्मासव्रत आराधिका श्रीगोदा देवी

धार्मिक 卐 मासिक 卐 प्रकाशन

वर्ष-२५ अङ्क-७

श्रीवेङ्कटेश देवस्थान ८०/८४ फणसवाडी, बम्बई—२

# विषयानुक्रमणिका

卐



## सम्पादक-मण्डल




| वार्षिक भेंट—<br>भारत में ३०) रु०<br>आजीवन ३०१) रु० | कर्म हमारा जीवन है ।<br>धर्म हमारा प्राण है ।। | साधारण प्रति<br>भारत में<br>६)०० रु० |
|---|---|---|

।। श्रीमते रामानुजाय नमः ।।

अनन्ताचार्यवर्याणामनन्ताऽद्भुतभावदः । जीयादनन्तसन्देशः सदनन्तप्रभावतः ।
ईशानां जगतोऽस्य वेङ्कटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं, तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षान्तिसम्बर्धिनीम् ।
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियं, वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ।।

वर्ष २५ सम्वत् २०५३ मार्गशीर्ष | श्रीधाम-वृन्दावन | दिसम्बर १९९६ अङ्क-७

## ।। श्रीगोदा-स्तुतिः ।।

आर्द्रापराधिनि जनेऽप्यभिरक्षणार्थं रङ्गेश्वरस्य रमया विनिवेद्यमाने ।
पार्श्वे परत्र भवती यदि तत्र(नस्यात्)नासीत् प्रायेण देवि वदनं परिवर्त्तितं स्यात् ।।
जातापराधमपिमामनुकम्प्यगोदे गोप्त्रीयदित्वमसियुक्तमिदं भवत्याः ।
वात्सल्यनिर्भरतया जननी कुमारं स्तन्येन वर्द्धयति दष्टपयोधरापि ।।

देवि ! घना अपराध करने वाले जनों पर श्रीरङ्गभगवान् से अभिरक्षण के लिए रमादेवी से निवेदन किये जाने पर भी यदि आप पार्श्व (बगल) में विराजमान नहीं होतीं तो प्रायः प्रभु का वदन परिवर्तित (दूसरी ओर विमुख) हो जाता, आप अपराधियों के रक्षण में सहायिका हैं । आर्द्र=घन । 'आर्द्रं सान्द्रं क्लिन्नम् (कोष) ।

गोदे ! मैं अपराध करता हूँ, तो भी आप मुझ पर कृपाकर रक्षा करती हैं, यह आपके योग्य ही हैं । दुधमुहा कुमार अपने दांतों से जिस (जननी) के स्तनों को कांट देता है, तो भी वात्सल्य प्रेम पर ही निर्भर रहने वाली, वह जननी अपने उन्हीं स्तनों के दूध से उसका संवर्द्धन करती ही है ।

(हिन्दी अनुवादक— आचार्य गुरुचरण मिश्र)

# सम्पादकीय—

## श्रीमहालक्ष्मी का चरित्र वैभव

★

त्रिपाद्‌विभूति में विराजने वाले श्रीनारायण भगवान् ने वैदिक अष्टाक्षर मन्त्रराज का प्रथम उपदेश श्रीलक्ष्मीजी को दिया, अतः श्रीलक्ष्मीजी श्रीनारायण भगवान् की शिष्या हुईं, अतएव उन लक्ष्मीजी की गुरु परम्परा में गणना होती है, यह मन्त्रग्रहण का विषय नारदपाञ्चरात्र वृहद्‌ब्रह्म संहिता में द्वितीयाध्याय के अन्त में वर्णित है। वहाँ पर लक्ष्मीनारायण सम्वाद है, उसी जगह तत्वोपदेश विषय में लक्ष्मीजी के प्रश्न करने पर भगवान् नारायण ने कहा है—

**तस्मात्सकलसिद्ध्यर्थं कमले भुजमूलयोः ।**
**सन्धारय महाभागे ! शङ्खचक्रे सनातने ॥**

हे लक्ष्मीजी ! हमारे पूर्वकथनानुसार सब कार्यों के सिद्ध करने के लिए सनातन इन शङ्ख चक्रों को तुम अपने भुजमूल में धारण करो, इतना कहने के बाद शंख चक्र का नियम तथा कब से कैसे किसको हुआ यह सब कथा कहकर आगे कहा कि—

**अतः कान्ते ! त्वया कार्या श्रद्धा मच्चक्रधारणे ।**
**सन्धारय मुमुक्षूणां प्रजानां च ममाज्ञया ॥**
**ओमित्युवाच सा देवी चक्रशङ्खौ भुजद्वये ।**
**प्रयोजनान्तरं हित्वा मन्त्रराजमथादधौ ॥**

भगवान् ने कहा कि हे कान्ते ! पूर्वोक्त हेतु से मेरे शंख चक्रों के धारण करने में तुमको श्रद्धा करनी चाहिए। सम्पूर्ण प्रजावर्ग और मुमुक्षुजनों के हित करने को मेरी आज्ञा से शंख चक्र धारण करो। इस प्रकार भगवान् के कथन को सुनकर लक्ष्मीजी ने दोनों भुजाओं में शंख चक्रों को धारण करके फिर अष्टाक्षर मन्त्रराज नारायण मन्त्र को ग्रहण किया। इत्यादि कथा पाञ्चरात्र में वर्णित है।

भगवान् नारायण जैसे नित्य एवं जगत् के उद्भव, पालन तथा सबको समेट कर सूक्ष्म रूप से अपने अन्दर रखने वाले हैं वैसे ही लक्ष्मीजी भी नित्य तथा नारायण की सहचारिणी, नित्यानपायिनी रत्नाकर समुद्र समुद्भूता हैं। भगवान् के अवतार के अनुरूप ही श्री लक्ष्मीजी का अवतार होता है—श्रीविष्णुपुराण साक्षी है—

**राघवत्वेऽभवत् सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि ।**
**अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषानपायिनी ॥**

श्रीहरि के रामावतार के साथ सीताजी हुईं, और कृष्णावतार में रुक्मिणीजी हुईं, इस प्रकार अन्य अवतारों में भी यह भगवान् विष्णु से पृथक् नहीं होती हैं, विष्णोः श्रीरनपायिनी। और—

**देवत्वे देवदेहेयं मनुष्यत्वे च मानुषी ।**
**विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषात्मनस्तनुम् ॥**

भगवान् के देवरूप होने पर ये दिव्य शरीर धारण करती हैं और मनुष्य होने पर मानवी रूप से प्रकट होती हैं। श्रीविष्णु भगवान् के शरीर के अनुरूप ही ये अपना शरीर भी बना लेती हैं।

श्रीलक्ष्मीजी पहले भृगुजी की ख्याति नामक स्त्री से उत्पन्न हुईं, बाद में अमृत मन्थन के समय देवों-दानवों के प्रयत्न से वे समुद्र पुत्री के रूप में उत्पन्न हुईं।

**ततश्चाविरभूत् साक्षाच्छ्री रमा भगवत्परा ।**
**रंजयन्ती दिशः कान्त्या विद्युत् सौदामिनी यथा ॥**
(श्रीमद्भा० ८।८।८)

समुद्रमन्थनके समय सर्वभाव से भगवत्परायणा साक्षात् भगवती श्रीलक्ष्मीजी प्रकट हुईं, अपनी कान्ति से सम्पूर्ण दिशाओं को प्रकाशित हुई, जैसे विद्युत् (बिजली) अपनी चमक से सबको प्रकाशित करती हैं वैसे रमा का प्रकाश हुआ, और उन्होंने देव तथा दानवों के देखते हुए भगवान् नारायण के गले में माला डालकर उन्हें पतिरूप में स्वीकार किया।

पद्मपुराण त्रिपाद्‌विभूति प्रकरण में महालक्ष्मी जी का वैभव इस प्रकार वर्णित है—

**नित्यं संभोगमैश्वर्या श्रिया भूम्या च सम्वृतम् ।**
**नित्यैवैषा जगन्माता विष्णोः श्रीरनपायिनी ॥**

श्रीमन्नारायण नित्य ही ईश्वरी लक्ष्मीजी तथा भूदेवी के साथ विराजमान हैं, यह श्रीलक्ष्मीजी जगत् की माता हैं, नित्य भगवान् के साथ रहने वाली हैं।

**यथा सर्वगतोविष्णुस्तथा लक्ष्मीः शुभानने ।**
**ईशाना सर्वजगतो विष्णुपत्नी सदा शिवा ॥**

जैसे विष्णु सर्वव्यापक हैं वैसे ही लक्ष्मीजी भी हैं। सम्पूर्ण जगत् की ईश्वरी हैं, श्रीविष्णु भगवान् की पत्नी हैं। सदा शिवा-कल्याणरूपा हैं।

**यदपाङ्गाश्रितं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।**
**जगत् स्थितिलयौ तस्या उन्मीलननिमीलनात् ॥**

सम्पूर्ण स्थावर जङ्गम जितने हैं वे सब लक्ष्मी जी के कटाक्ष के आधीन हैं, उनके नेत्र खुलने और मुंदने से संसार का पालन तथा संहार होता है।

**यस्याः कटाक्षायतमात्रहृष्टा**
**ब्रह्मा शिवस्त्रिदशपतिर्महेन्द्रः ।**
**चन्द्रश्च सूर्यो धनदो यमोऽग्निः**
**प्रभूतमैश्वर्यमथाप्नुवन्ति ॥**

लक्ष्मीजी के कटाक्षमात्र से देखते ही ब्रह्माजी, श्रीशिवजी, तीनों लोकों का पति इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, कुबेर, यम, अग्नि और सब देवगण सम्पूर्ण ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं।

**यस्य वक्षसि सा देवी प्रभाऽग्नाविव तिष्ठति ।**
**स वै सर्वेश्वरः श्रीमानक्षरः पुरुषोऽव्ययः ॥**

वे लक्ष्मीदेवी जिन भगवान्‌के वक्षःस्थलमें अग्नि में प्रभा की तरह निवास करती हैं, वे पुरुष अव्यय अक्षर भगवान् श्रीमान् नारायण हैं। श्रीविष्णुपुराण के प्रथम अंश, अष्टम अध्याय में भी उल्लेख है कि—

**नित्यैवैषा जगन्माता विष्णोः श्रीरनपायिनी ।**
**यथा सर्वगतो विष्णुस्तथैवेयं द्विजोत्तम ! ॥**

श्रीलक्ष्मीजी नित्य ही जगत् की माता हैं, श्रीविष्णु भगवान् की सहचारिणी हैं। जैसे विष्णु सर्वव्यापक हैं, वैसे ही लक्ष्मीजी हैं। ध्यान देने वाली बात यह है कि जगत् में जितने प्रसिद्ध पुरुषवाचक शब्द हैं वे विष्णु के हैं। उन पुरुषों की स्त्रीवाचक जितने शब्द हैं वे लक्ष्मीजी के हैं। एक समय श्रीशंकरजी के अंश से पैदा हुए दुर्वासा मुनि घूमते हुए गन्धर्वलोग में गये तो वहाँ एक विद्याधरी के हाथ में ऐसी माला देखी, जिससे वहाँ का सम्पूर्ण वन सुरभित हो रहा था, उस माला को बड़ी मनोहर जान दुर्वासा मुनि ने उस विद्याधरी से माँगी, तब उसने भी प्रणाम कर माला मुनि को दे दी। उस माला को धारणकर मुनि दुर्वासा अपनी मस्ती में विचरण कर रहे थे,उसी समय देवराज इन्द्र ऐरावत हाथी पर चढ़े, आते हुए मिल गये। दुर्वासाजी ने अपनी माला उस ऐरावत हाथी को पहिना दी। उस माला की सुगन्ध से वह हाथी भी मदान्ध हो उस माला को सूड में पकड़कर जमीन में फेंक दी यह देख दुर्वासा क्रोधित हो गये, उन्होंने इन्द्रको शाप दिया, हे देवराज तुम ऐश्वर्य मद से मतवाले हो गये हो, तुमने हमारी प्रसादी माला का तिरस्कार किया है अतः तुम्हारी तीनों लोकों की श्री नष्ट हो जायगी, तेरा यह त्रिलोक लक्ष्मीजी से रहित हो जायगा। यह वचन सुन इन्द्र ने ऐरावत से उतरकर दुर्वासा मुनि की प्रार्थना की, पर वे इन्द्र को क्षमा न कर आगे बढ़ गये, तब इन्द्र स्वर्ग को गये। बस तब से इन्द्र सहित तीनों लोक विना लक्ष्मी के हो गये। औषधी सब क्षीण हो गईं। यज्ञों का होना बन्द हो गया। दान धर्मों में किसी का मन नहीं रहा। सब लोक सत्व हीन हो गये। क्योंकि जहाँ लक्ष्मी है वहीं सत्व रहता है। देवताओं की ऐसी दशा हो गई कि दैत्य-दावन देवताओं पर जबरन आधिपत्य करने लगे। तब इन्द्र अग्नि आदि सब देवता ब्रह्माजी के पास गये, उनकी बातों को सुन ब्रह्माजी सब देवों को लेकर श्रीमन्नारायण की शरण में गये, वे क्षीरसागर के उत्तर किनारे पर पहुँचकर श्रीमन्नारायण की स्तुति करने लगे तदनन्तर भगवान् ने देवों को दर्शन दिया और अपना मनोरथ

कहा—भगवान् ने आज्ञा दी कि तुम मिलकर वनों की औषधियों को क्षीरसागर में डालो, मन्दराचल की मथानी बनाओ, वासुकी सर्प की रस्सी बनाकर समुद्र का मन्थन करो, तब उसमेंसे अमृत निकलेगा, हम ऐसा उपाय करेंगे कि असुरों को अमृत न मिलेगा, उसको तुम लोग पीकर बली हो जाओगे।

भगवान् की आज्ञा से देवों और दानवों ने समुद्र का मन्थन करना आरम्भ किया तब समुद्र से चौदह रत्न उत्पन्न हुए। जो इस प्रकार हैं—

**लक्ष्मीः कौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चद्रमाः**
**गावः कामदुधाः सुरेश्वर गजो रम्भादि देवांगनाः।**
**अश्वः सप्तमुखस्तथा हरिधनुः शखं विषं चामृतम्**
**रत्नानीह चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु नो मङ्गलम् ॥**

मन्थन करने पर सुरभि गौ, वारुणीमदिरा, कल्पवृक्ष, अप्सरायें, चन्द्रमा, विष, धन्वन्तरि वैद्य, कौस्तुभमणि, ऐरावत हाथी, सातमुख वाला घोड़ा, दक्षिणावर्त शंख, श्रीहरि का धनुष, अमृत, महालक्ष्मीजी सहित चौदह रत्न निकले।

समुद्र मन्थन के समय मन्दराचल बहुत हल्का मालूम पड़ा और मन्थन ठीक से नहीं हुआ, तब एक रूप से पर्वत के ऊपर बैठ गये और जब भार के मारे पर्वत नीचे जाने लगा, तब ठकार अक्षर के समान कूर्मरूप धारणकर नीचे जाकर पर्वत को उठा लिया, फिर जब मथते-मथते देवता हार गये तब तीसरा रूप धरके उनके साथ होकर स्वयं सर्प की डोरी से मथन करने लगे, भगवान् ने इतना परिश्रम अपनी प्रिया लक्ष्मीजी इस समुद्र से प्रकट होंगी, हमें मिलेंगी, इसलिए किया। श्रीयामुनाचार्यजी महाराज ने कहा है—'यदर्थमम्भोधिरमन्थ्यबन्धि च' उन लक्ष्मीजी के लिए आपने समुद्र का मन्थन और रामावतारमें सेतु बन्धन भी किया, इससे प्रेमवश भगवान् समुद्र को छोड़ते ही नहीं हैं।

समुद्र मन्थन हो जाने पर लक्ष्मीजी प्रकट हुईं जिनकी कान्ति से दशों दिशाओं का अन्धकार भाग गया। लक्ष्मीजी की चारों भुजाओं में कमल पुष्पादि शोभित हैं। उन परात्पर रमाकी देवगण श्रीसूक्तादि से स्तुति करने लगे। सबने नाना औषधियों से उनका अभिषेक किया। समुद्र ने प्रकट होकर नीलकमल की माला पहनाई। सब भूषणों से भूषित हो लक्ष्मीजी ने सबके ऊपर दृष्टिपात किया, तब से सब देवगण आनन्दित हुए, तदनन्तर नारायण के वक्षःस्थल में आसन ग्रहण किया। तब से भगवान् श्रीमन्नारायण हुए। उस समय लक्ष्मीजी की शोभा, स्वरूप, सौकुमार्य, माधुर्य अपूर्व वर्णनातीत ही था। श्रीपराशरभट्टार्य स्वामीजी ने श्रीगुणरत्नकोश में एक रत्नरूप श्लोक से वर्णन किया है—

**पादारुन्तुदमेव पङ्कजरजश्चेटीभिरालोकितै**
**रङ्गम्लानिरथाम्ब ! साहसविधौ लीलारविन्दग्रहः।**
**दोला ते वनमालया हरिभुजे हा कष्ट शब्दास्पदम्**
**केन श्रीरतिकोमला तनुरियं वाचां विमर्दक्षमा ॥**

हे देवि ! आप जिस कमलपुष्प पर विराजी हैं, उस कमल के परागरज तो आपके चरणों में कंकण के समान चुभते होंगे और दासियों की दृष्टिके तेज से आपका शरीर कुंमला जाता होगा और आपने अपने हस्त में क्रीडाके लिए जो कमलपुष्प धारण किया है वह तो बड़ा ही साहस किया है और श्रीहरि के कठोर वक्षःस्थल के बीच वनमाला के झूला में आप विराजी हो यह भी बड़े कष्ट की बात है। ऐसी आपके शरीर सौकुमार्य - कोमलता को किस वाणी से कोई कह सकता है अर्थात् कोई नहीं कह सकता।

पाञ्चरात्र की एक लक्ष्मीतन्त्रसंहिता है, उसमें लक्ष्मीजी के सात्विक, राजस, तामस भेद से अवतार वर्णित हैं। ऐसे अपार वैभव वाली लक्ष्मीजी श्रीमन्नारायण की वल्लभा हैं, यह बात मन्त्र ब्राह्मण भागरूप वेदों में प्रसिद्ध है यजुर्वेदसंहिता पुरुषसूक्त अध्याय के अन्त में 'श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे' इस श्रुति में 'सहस्रशीर्षा पुरुषः' इस आरम्भ से पुरुष नामक परमेश्वर की पत्नी लक्ष्मी को कहा है। पुरुष नाम नारायण का है, यह बात शतपत्र त्रयोदशकाण्ड चतुर्थ प्रपाठक षष्ठाध्याय प्रथम ब्राह्मण के आरम्भ में कही है।

**—पं० श्रीकेशवदेव शास्त्री**

# श्रीगोदा-देवी

श्री १००८ श्रीमद् वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्योभयवेदान्तप्रवर्तकाचार्य श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य
जगद्गुरु भगवदनन्तपादीय श्रीमद् विष्वक्सेनाचार्य श्रीत्रिदण्डी स्वामीजी महाराज (विहार)
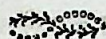
**श्रीविष्णुचित्तमहता विपिने तुलस्याः लक्ष्म्यंशजा जनकराजसुतेव लब्धा ।**
**मासे शुचौ कुजदिनेऽपरफाल्गुनीभे गोदाम्बुजासुचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥**

श्रीहेमवर्णा चन्द्रमुखी पिकवयनी श्रीगोदाम्बाजी अपने दाहिनी मुट्ठी में लाल खिला हुआ कमल के फूल को लेकर हाथ को मस्तक के थोड़ा ऊपर किये हुये तथा बायें हाथ को नीचे पृथ्वी की ओर लटकाई हुई, श्रीचूर्ण ललाट पर लगाई हुई, श्रीवैकुण्ठवल्ली महालक्ष्मी देवी की सन्निधि में पूर्वाभिमुख खड़ी होकर दर्शन दे रही हैं। उन्हीं के विषय में आज मैं इस मङ्गलाचरण के श्लोक को कहा हूँ कि—

त्रेता युग में विहार प्रदेश में दरभंगा जिले अन्दर एक सीतामढ़ी ग्राम है। वहाँ पर राजन्य जनक राजा ने वैशाख मास शुक्ल नवमी को हल की पद्धति से लक्ष्मी श्रीसीता देवी को प्राप्त किया था। उसी प्रकार से पाण्ड्यदेश में एक धन्वीनव्य (श्रीविल्लीपुत्तूर) नाम का नगर है। इसमें एक ब्राह्मण, आलवार एवं महात्मा श्रीविष्णुचित्त स्वामी रहते थे। वे तुलसी के नन्दनवन लगाये थे। उसी में कलियुग के ९८ वें वर्ष के नल नामक संवत्सर में कर्क राशि के भास्कर के होने पर, आषाढ़ मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्थी तिथि को पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र में मंगलवार को मध्याह्न काल में तुलसी की जड़ से लक्ष्मी के अंश श्री भू देवी से उत्पन्न श्रीगोदा देवी को प्राप्त किये।

उन श्रीगोदाम्बाजी के सुन्दर लाल चरणों को मैं अपना रक्षक समझ कर प्रपत्ति करता हूँ।

अपने दाहिने हाथ में लाल कमल का फूल तथा तुलसी के क्यारी से जन्म लेकर श्रीवैष्णवों के वाह्य चिह्न को बताती हुई यह कहती हैं कि तुलसी के काष्ठ की माला तथा कमल के बीज की माला जिसके गरदन में लटकती हो उसे श्रीवैष्णव जानना। जैसा श्रीवेदव्यासजी भी कहे हैं—

**'ये कण्ठलग्न तुलसीनलिनाक्षमाला।** (पद्मपु० ६।२२४।७६)

इससे यह उपदेश देती हैं कि यदि अपने घर में सोने चाँदी की माला रखना चाहते हो तो इस तुलसी एवं कमल की भी माला धारण करना, नहीं तो अन्य सुवर्ण आदि की मालायें बेच देनी पड़ेगीं। दूसरे, ये उपदेश देती हैं कि दिव्य देश में जाकर और न बन सके तो कम से कम तुलसी पुष्प से भगवान् की अवश्य अर्चना कराना तथा पुष्पाञ्जलि देना क्योंकि भगवान् गीता में कहे हैं कि **'पत्रंपुष्पम्'** (९।२६)। तीसरे—ये बताती हैं कि छप्पनों प्रकार के व्यञ्जन बनाओ परन्तु जब तक तुलसी दल नहीं डालोगे तब तक वह भगवान् को प्रिय नहीं होगा। बायें हाथ को पृथ्वी की ओर इशारा देती हुई अपना परिचय दे रही हैं कि मैं भू देवी का ही अवतार हूँ। वेद में भी बताया गया है—

**'श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ।'** (शुक्ल यजु० अ० ३१)

भू देवी और लक्ष्मी देवी आप पत्नी हैं। इसलिए महालक्ष्मी की सन्निधि में मैं भू देवी हूँ। भू देवी के विषय में 'भू सूक्त' प्रमाण है—

**धनुर्धरायै विद्महे सर्व सिद्ध्यै च धीमहि। तन्नो धरा प्रचोदयात्॥** (भू० सू० ११)

धनुष धारण करने वाली को हम जानते हैं, सर्व सिद्धि देने वाली को ध्यान करते हैं, वह धरा देवी हमें सद्धर्म में प्रवृत्त करें ॥११॥ एक ही सन्निधि में रहकर भारतीय नारियों को ये उपदेश देती है कि यदि किसी कारण तुम्हारे पति दो विवाह कर लें और अलग-अलग गृह बनाने की शक्ति न हो तो दोनों स्त्रियाँ एक साथ प्रेम से रहकर जीवन व्यतीत करना तभी नाम यश ठीक रहेगा तथा जिस तरह मैं लक्ष्मीजी से छोटी पत्नी हूँ इसलिए हमेशा बड़ी की सेवा करने के लिये खड़ी रहती हूँ इससे मैं विश्व पूज्या हो गई हूँ उसी प्रकार तुम भी अपने से बड़ी स्त्री के सामने हमेशा खड़ी रहकर सेवा के लिये तैयार रहना तब पूज्यतमा बन जावोगी। पूर्वाभिमुख खड़ी होकर भारत की महिलाओं को ये उपदेश देती हैं कि आप सीता, सावित्री, लोपामुद्रा, अनुसूया आदि पूर्व महिलाओं के आचरण, रहन-सहन को अपनाना तब आनन्द से रहोगी अन्यथा नहीं। आषाढ़ मास यानी शुचि मास में जन्म लेकर ये बताती हैं कि बाह्य और आभ्यन्तर दोनों शुचि रखना तथा अपने भोजन, रहन, सहन को भी पवित्र रखना तब खान-दान शुद्ध रहेगा। मंगलवार को अवतार लेकर ये बताती है कि **'मंगलं भगवान विष्णुः'** इसके अनुसार जो मङ्गल स्वरूप हमारे पति हैं उनकी आराधना करना तब तुम्हारा भी मङ्गल होगा। इसी को मानसकार भी कहते हैं—**'मंगल भवन अमंगल हारी।'** (रा० मा० १।१०) अपने अवतार स्थल की भाषा द्रविड में दो प्रबन्ध—(१) तिरुप्पावै और, (२) नाच्यारतिरुमोली को बनाकर ये उपदेश देती हैं कि जिस देश में रहे उसी क्षेत्र की भाषा में ग्रंथ का निर्माण करना चाहिए तभी वह लोकप्रिय होता है तथा नारियों को शिक्षा देती हैं कि विद्या ग्रहण कर सात्त्विक ग्रंथ बनाने की चेष्टा करनी चाहिए। पालन पोषण करने वाले ब्राह्मण विद्वान श्रीविष्णुचित्त स्वामी को अपना गुरु बनाकर भारतीय नारियों को ये उपदेश देती हैं कि तुम्हें भी ब्राह्मण विद्वान को गुरु अवश्य बनाना चाहिए। इस तरह के मार्मिक उपदेश देने वाली श्रीगोदाम्मा का मैं स्मरण करता हूँ। ऐसी श्रीगोदाम्मा का भजन करने के लिए कहता हुआ आधुनिक कवि कहता है—

भज मन विष्णुचित्त दुहिता को, ऐसे अद्भुत चरिता को।
कर्कट मास अति सुख कारी। पूर्व फाल्गुनी अति उपकारी।
तुलसी वन में प्रकट भई है, जैसे जन्म भयो सीता को॥ १॥
श्री लक्ष्मी जी आप पधारी, आश्रित दुःख हरणी।
गाथा तीस तिरुप्पावै की, दिव्य प्रबन्ध करणी॥ २॥
श्री हरि जी की परम प्रेयसी, करुणा पारावार।
हठ करि प्रभु सों मुक्ति दिलावत, करती विरजा पार॥ ३॥
तुम रक्षक श्रीगोदा जननी चरनन की बलिहार॥

卐

श्रीपराशरभट्टार्यैरनुगृहीतम्—

# श्रीरङ्गनाथस्तोत्रम् (कावेरीपञ्चकम्)

—पं. केशवदेव शास्त्री, वृन्दावन

卐

श्रीशैलेशदयापात्रं श्रीरङ्गेश पुरोहितम् ।
श्रीवत्साङ्कसुतः श्रीमान् श्रेयसे मेऽस्तु भूयसे ॥

श्रीशैलेशाचार्यजी के दया के पात्र श्रीरङ्ग भगवान् के पुरोहित तथा श्रीवत्साङ्क स्वामीजी (श्रीकूरेश स्वामीजी) के सुपुत्र श्रीमान् पराशरभट्टार्य स्वामीजी मेरा महान् कल्याण करें ।

सप्तप्राकारमध्ये सरसिज मुकुलोद्भासमाने विमाने
कावेरी मध्यदेशे मृदुतरफाणिराज भोगपर्यङ्कभागे ।
निद्रामुद्राभिरामं कटिनिकटशिर पार्श्वविन्यस्तहस्तम्
पद्माधात्रीकराभ्यां परिचितचरणं रङ्गनाथं भजेऽहम् ॥

अर्थ—श्रीरङ्गनाथ भगवान् का श्रीरङ्गम् स्थित दिव्यदेश सात सुदृढ़ और ऊँचेबने चारदिवारियों से युक्त है । कमल कली के समान शोभायमान विमान में विराजमान, उभयकावेरी के मध्यदेश में अतिशय कोमल शेष शैय्या पर निद्रामुद्रा में शयन किये, एक हस्त कमल शिर केनीचे और दूसरा पासमें फैलाये तथा श्रीलक्ष्मी जी एवं भूदेवी जिनकी चरण सेवा में तत्पर हैं ऐसे श्रीरङ्गनाथ भगवान् को मैं (श्रीपराशर भट्टार्य) भजता हूँ ।

कदाऽहं कावेरीतटपरिसरे रङ्गनगरे शयानं भोगीन्द्रे शतमखमणिश्यामलरुचिम् ।
उपासीनः क्रोशन् मधुमथन ! नारायण ! हरे ! मुरारे ! गोविन्देत्यनिशमपनेष्यामि दिवसान् ॥१॥

अन्वय—अहम्, कदा, कावेरीतटपरिसरे, रङ्गनगरे, भोगीन्द्रे शतमखमणिश्यामलरुचिम्, शयानम्, मधुमथन, नारायण, हरे, मुरारे, गोविन्द, इति, अनिशम्, उपासीनः, क्रोशन्, दिवसान्, अपनेष्यामि ॥१॥

मैं (श्रीपराशर भट्टार्य) ( प्रत्येकप्राणी ) ऐसा कौनसा समय आयेगा जब परमपुण्योदका कावेरी के तटीय दायिरे में स्थित श्रीरङ्गम् नगर में श्रीअनन्त शैय्या पर शयन करते हुये, सैकड़ों नीलकान्त मणि सदृश शोभायमान नीलकान्ति वाले श्रीरङ्गनाथ भगवान् की सन्निधि में बैठा हुआ, मधुदैत्य को मन्थन करने वाले भगवान् मधुहा, स्थूल और सूक्ष्म चिद् चिद् विशिष्ट ब्रह्म नारायण, जीवों के पापों को हरण करने वाले हरि,मुर दैत्यके शत्रु मुरारि सुरभि गौ के दुग्ध से स्नान करने वाले गोविन्द इन भगवन्नामों की रातदिन उपासना करता (लेता) हुआ दिनों को व्यतीत करूँगा ॥१॥

कदाऽहं कावेरी विमलसलिले वीतकलुषो भवेयं तत्तीरे श्रममुषि वसेयं घनवने ।
कदा वा तं पुण्ये महति पुलिने मङ्गलगुणम् भजेयं रङ्गेशं कमलनयनं शेषशयनम् ॥२॥

अन्वय—अहं, कावेरी विमलसलिले, वीत कलुषः, कदा, भवेयम्, तत्तीरे, श्रममुषि, घनवने, वसेयम्, कदा, वा, महति, पुण्ये, पुलिने कमलनयनं, शेषशयनम्, मङ्गलगुणम्, तं, रङ्गेशम्, भजेयम् ।

अर्थ—मैं (श्रीपराशर भट्टार्य) पुण्योदका कावेरी के निर्मल जलमें स्नान करके कब निष्कलमष निर्दोष होऊँगा। उस श्री कावेरी के तट पर परिश्रम को दूर करने वाले सुखद घनें बन में कब निवास करूँगा। अथवा महान् पुण्यप्रद कावेरीतट पर कमलसदृश दीर्घ और सुन्दर नेत्र वाले शेषशैय्या पर शयन करने वाले, परम माङ्गलिक गुणों से युक्त उन जगत् प्रसिद्ध रङ्गनाथ भगवान् को मैं कब भजूँगा ॥२॥

**पूगीकण्ठद्वयससरसस्निग्धनीरोपकण्ठाम् आविर्मोदस्तिमितशकुनानूदितब्रह्मघोषाम् ।**
**मार्गे-मार्गे पथिकनिवहैरुञ्छ्यमानापवर्गां पश्येयं तां पुनरपि पुरीं श्रीमतीं रङ्गधाम्नः ॥३॥**

अन्वय—पूगीकण्ठद्वयससरसस्निग्ध नीरोपकण्ठाम्, आविर्मोदस्तिमित शकुना नूदित ब्रह्म घोषाम्, मार्गो, मार्गो, पथिकनिवहै, उञ्छ्यमानापवर्गाम्, रङ्गधाम्नः, तां श्रीमती, पुरीम्, पुनरपि, पश्येयम्।

अर्थ—सुन्दर सुपाड़ी के वृक्षों से युक्त युगल तटीय प्रदेश वाले, सरस मधुर जलप्रवाह (श्री-कावेरी) के समीपस्थित तथा आनन्द में भरे हुये जहाँ के पक्षियों द्वारा वेदपाठी ब्राह्मणों के वेदमन्त्रों का अनुकरण किया जारहा है ऐसी वेदध्वनि से युक्त जहाँ के प्रत्येक मार्ग में राहगीरों के झुण्डों द्वारा मोक्षसुख को भी त्याग दिया गया है ऐसे श्रीरङ्गनाथ भगवान् के वासस्थान-भूत उस प्रसिद्ध वैभव वाली श्रीमती रङ्गपुरी को फिर से (कब) देखूँगा ॥३॥

**कस्तूरीकलितोर्ध्वपुण्ड्रतिलकं कर्णान्तलोलेक्षणम् मुग्धस्मेरमनोहराधरदलं मुक्ताकिरीटोज्ज्वलम् ।**
**पश्यन्मानसपश्यतोहररुचः पर्यायपङ्केरुहम् श्रीरङ्गाधिपतेः कदा नु वदनं सेवेय भूयोऽप्यहम् ॥४॥**

अन्वय—अहम्, श्रीरङ्गाधिपतेः, कस्तूरीकलितोर्ध्वपुण्ड्र- तिलकम्, कर्णान्तलोलेक्षणं, मुग्धस्मेर मनोहराधरदलम्, मुक्ताकिरीटोज्जवलम्, पश्यन्, मानसपश्यतोहररुचः, पर्यायपङ्केरुहं, वदनं, भूयः अपि, कदा, नु, सेवेय।

अर्थ—श्रीरंगपुरी के स्वामी श्रीरङ्गनाथ भगवान् कस्तूरी से रचित ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलकवाले, कानों तक विस्तीर्ण नेत्रवाले,मोहित करने वाली मन्द स्मितसे मनको हरण करने वाले अधर दल वाले, बहुमूल्यमोतियों से जटित किरीट से देदीप्यमान, दर्शन करने वाले के मनको देखते देखते ही स्वर्ण को चुराने वाले स्वर्णकार के समान चुराने वाले सुन्दर मुख कमल को मैं फिर से कब देखूँगा ॥४॥

**न जातु पीतामृतमूर्च्छितानां नाकौकसां नन्दनवाटिकासु ।**
**रङ्गेश्वर ! त्वत्पुरमाश्रितानां रथ्याशुनामन्यतमो भवेयम् ॥५॥**

अन्वय—हे रङ्गेश्वर ! नन्दनवाटिकासु, पीतामृतमूर्च्छितानां, नाकौकसां, जातु, न, त्वत्, पुरम्, आश्रितानां, रथ्याशुनाम्, अन्यतमः, भवेयम्।

अर्थ—हेरङ्गनाथ भगवान् नन्दनवन की वाटिकाओं में अमृत पीकर मूर्च्छित अवस्थामें पड़े रहने वाले मदमस्त देवताओं के समूह में मैं कभी न होऊँ अर्थात् मेरा जन्म न होवे किन्तु आपकी पुरी श्रीरङ्गनगरी की वीथियों का आश्रय लेकर रहने वाले कुत्तों में कोई एक हो जाऊँ तो मेरा अहो-भाग्य है ॥५॥

गतांक से आगे

# श्रीवैष्णव-लक्षण

—पा० श्रीवेंकटाचारीजी मद्रास

卐

कुछ दिनों के बाद दूसरी गोष्ठी में बिठाया। फिर तीसरी, चौथी, पांचवी, छठी और सातवीं में बिठाया। आखिर उस शिष्य को सब लोगों के भोजन के पश्चात् खाने को कहा गया। शिष्य ने बड़ी प्रसन्नता से आचार्य के आदेशों का पालन किया। इस प्रकार, जांच होते होते उसका मुंह प्रफुल्लित एवं विकसित हुआ।

इसे देखकर अनन्ताचार्य अपने मन ही मन बहुत सन्तुष्ट हुये और शिष्य के स्थैर्य की बड़ी प्रशंसा की। अब उन्होंने (अनन्तालवान) उसे अपने साथ भोजन के लिये बिठा लिया। शिष्य परीक्षा में सफल निकला।

भोजन के बाद अनन्तालवान ने कहा कि तुम्हारे यहाँ आकर छः महीने से अधिक हो गया। तुम तो यहाँ सच्चे वैष्णव के लक्षण जानने के लिये आये। कल सबेरे (यहां से बिदा लेकर निकलने के पहले) तुमको इसका उत्तर मिल जायगा। उसके बाद तुम जा सकते हो।

दूसरे दिन सबेरे अनन्तालवान से शिष्य का बिदा लेने का समय हो गया। (भट्टर का शिष्य) सूर्य का उदय होता है। आश्रम से थोड़ी दूर एक मुर्गी एक टीले से बोलती है। आश्रम के तालाब के किनारे एक सारस (पक्षी) योगी की तरह निश्चल खड़ा है। भागवतों के नित्य तदीयाराधन के लिये एक भागवत प्रेमी नमक के एक बोरे को उठा लाता है और वहाँ उतारता है।

शिष्य ने अनन्तालवान को साष्टांग नमस्कार किया और उनके आदेश की प्रतीक्षा में खड़ा रहा। अनन्तालवान ने आशीर्वाद देते हुये कहा कि तुम तो अपने गुरु की आज्ञा के अनुसार सच्चे श्रीवैष्णव के लक्षण जानने के लिये आये हो न ? अब ध्यान से सुनो—श्रीवैष्णव के लक्षण—

कोक्कैप्पोल् इरुप्पान्, कोकि पोल् इरुप्पान्,<br>
उप्पैप्पोल् इरुप्पान्, उम्मैप्पोल् इरुप्पान् (तमिल मूल)

"श्रीवैष्णव वही है—जो सारस पक्षी के समान, गुणवाला हो, मुर्गी के समान गुणवाला हो। नमक का गुणवाला हो। उपरोक्त गुणों के साथ तुम्हारा गुणवाला हो अर्थात् तुम्हारे जैसा होगा।

इन बातों को अच्छी तरह स्मरण रखो। श्रीरंगम् जाकर अपने गुरु से मेरी इन बातों को कहो। वे सारी बातें खोलकर तुमको समझा देंगे। यह बताकर उसको बिदा किया और आश्रम के अन्दर चले गये।

उत्तर पाकर बड़े आनन्द के साथ शिष्य तेजी से श्रीरंगम् की तरफ चला। हाँ, वही पदयात्रा। उसका मन अनन्ताचार्य ने जो सूत्र बताया, (उसके प्रश्न के उत्तर में) उसी पर चिन्तन कर रहा

था। श्रीरंगम् पहुँचते अपने गुरु भट्टर के दर्शन कर दण्डवत् नमस्कार करते हुये तिरुमलै की (अनन्तालवान के दर्शन सम्बधी) सभी बातों का विस्तार से निबेदन किया। अनन्तालवान ने वैष्णव के लक्षण के बारे में जो सूत्र रूप में बताया उसे भी बताया। अनन्तालवान का यह सन्देश भी बताया कि—"श्रीरंगम् पहुँचकर अपने गुरु से मेरी इन बातों को कहो—वे सारी बातें खोलकर तुम्हें समझा देंगे।

अपने शिष्य की सफलता पर भट्टर बहुत प्रसन्न हुये। भट्टर अपने शिष्यों को उस सूत्र का भाव बताते हुये स्वयं भी उसका अनुभव करते हैं। भट्टर ने कहा—ध्यान से सुनो, इसका आशय समझा दूँगा। हम भी उसे समझकर कृतार्थ बनेंगे।

**पराशर भट्टर**

(१)—"कोक्कॆप्पोल इरुप्पान्—"सारस पक्षी की तरह होगा।"

पहले "सारस पक्षी की तरह" शब्द समूह पर विचार करेंगे। स्थूल रूप से देखने पर सारस का रंग सफेद होता है। पानी भरे क्षेत्रों में वास करता है—अर्थात् तालाब एवं नदियों के आसपास रहता है। उसी तरह श्रीवैष्णव भी पवित्र नदी एवं तालाब के तटों पर, जहाँ पानी की समृद्धि है, वहाँ वास करता है और सारस की तरह स्वच्छ रहेगा। उनका हृदय निर्मल, निष्कलंक, शुभ्र एवं पवित्र होगा। सारस का लक्ष्य छोटी छोटी मछलियाँ नहीं होती। बड़ी मछलियों को ही पकड़ता है। उसी प्रकार वह वैष्णव छोटे मोटे लाभ (उपदेश) की बात में न आकर, ऐसे गुरु की शरण में जायेगा जो उसे भव-सागर से पार पहुँचायेंगे।

समुद्र तट पर रहने वाला सारस पक्षी वर्षा ऋतु से डरता है। वर्षाकाल में यह समुद्र तट छोड़कर दूसरे जलाशयों की ओर चला जाता है। श्रीवैष्णव भी यही करता है। जहाँ अपनी आत्मा को आध्यात्मिक विकासमें बाधा पड़ती है, वह तुरन्त उस स्थान को छोड़कर ऐसी जगह जाना चाहेगा जहाँ वातावरण उसकी आत्मोन्नति के विकास के लिये अनुकूल हो। सारस का उल्लेख करते वक्त अनन्तालवान उक्त गुणों पर विचार करते होंगे। दूसरा उदाहरण—**"कोलि पोल् इरुप्पान्"**

उनका दिया दूसरा उदाहरण मुर्गी को लें। हम देखते हैं कि कूड़ा कर्कट से बेकार चीजों को हटाकर अपने और बच्चों के लिये आवश्यक आहार खाद्य पदार्थ इकट्ठा करती है। उसपर अपना जीवन बिताती है। उसी प्रकार वैष्णव वेद शास्त्रों से उसका सार ग्रहण कर लेता है। वेद ग्रन्थों से, मंथित अमृत की तरह रहने वाला, इतिहास, पुराण और आलवार एवं आचार्यों के वेदान्त संबन्धी ग्रन्थ एवं प्रबन्धों का अध्ययन कर विषय संग्रह करता है और उसके अनुसार आदर्श जीवन बिताता है। इसका प्रचार सामान्य लोगों के बीच करेगा जैसे सन्तों ने वेदों का सार उतार कर उसको सरलतम रीति से लोगों के सामने रखा है।

**"नमक के समान होगा"**

आखिर इस पर विचार करेंगे कि श्रीवैष्णव "नमक" के समान होगा। यह उदाहरण अत्यन्त अद्भुत है। इस एक शब्द से वैष्णव के लगभग सभी लक्षण प्रकट होते हैं। स्थूल रूप से हम जानते हैं कि खाद्य पदार्थों में नमकका उपयोग अनिवार्य होता है। तमिल में एक कहावत है—"उप्पिल्ला पण्डम् कुप्पैयिले"। "नमक विना बिना पदार्थ कूड़ा कर्कट में फेंका जाता है" भागवत तो दास(कैंकर्य)

कुल का हैं। उसकी सेवायें समाज के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। यही नहीं इसका और गहरा भाव निकलता है।

नमक मिलाने पर ही व्यंजन स्वादिष्ट होता है। फिर भी कोई नमक की प्रशंसा नहीं करता। हाँ नमक ज्यादा होने पर स्वाद बिगड़ने से उसका दोष निकालते हैं। श्रीवैष्णव भी अपनी प्रशंसा नहीं चाहता, निन्दा पर भी कोई ध्यान नहीं देता। श्रीवैष्णव सच्चा सेवक, किंकर रहेगा। प्रशंसा या निन्दा के प्रति लापरवाह होगा। अपने दोषों का (दोष होने पर) पूर्ण ज्ञान रखकर उसे दूर करेगा। स्वयं मिटकर अपना सब कुछ खोकर व्यंजन को स्वादिष्ट बनाना नमक का प्राकृतिक गुण है। आत्म गुण है। इस प्रकार श्रीवैष्णव हर वक्त दूसरों की सेवा में अपने को मिटाने को तैयार होगा। नमक से इससे बढ़कर क्या सीख मिलेगी ?

वह किसी प्रकार के विवाद में न पड़ता है। हर स्थिति में (प्रशंसा एवं निन्दा; सुख एवं दुःख) में शान्त चित रहता है। उसका स्वभाव इतना निर्मल होता है कि निन्दा करनेवाले के प्रति भी कृतज्ञ होगा और उसका भला ही चाहेगा। यही विचारकर समभाव रखेगा कि निन्दक के द्वारा अपनी त्रुटियों से अबगत होने का मौका मिला है। सेवा करते अपने लिये कोई गौरव या यश नहीं चाहेगा। सेवा सम्बन्धी अपना स्व-विज्ञापन न करेगा अर्थात् आत्म प्रशंसा से दूर रहेगा। "मैं" की भावना या कर्तापन की भावना नहीं रखेगा। दूसरों की सेवा में स्वयं मिट जायेगा।

आखिर अनन्तालवान ने यह कहा है कि उम्मैंप्पोल् इरुप्पान् "उम्मैं" शब्द का प्रयोग है। तमिल में "नीर"—"उम्मैं" एक शब्द है। "तुम" तो अपने छोटों के लिये उपयोग होता है।" आप" आदर सूचक है। "नीर"—"उम्मैं" उपरोक्त इन दोनों शब्दों के (तुम—आप) बीच का है। लगभग समता की भावना प्रकट करता है। यह ध्यान देने की बात है।

भट्टर ने इसको भी स्पष्ट किया। अर्थात् श्रीवैष्णव तुम्हारे जैसे (उम्मैंप्पोल्) होगा। अर्थात् उनकी जाँच में तुम सफल निकले। आदर्श वैष्णव निकले।

पहले ही इसका विवरण दिया गया है कि तदीयाराधन में भोजन की गोष्ठी शिष्य की जाँच करने का जो तरीका अनन्तालवान ने अपनाया, और उस वक्त शिष्य ने शान्ति एवं सन्तोष के साथ, उनके आदेश का पालन किया, वर्ताव किया, उससे सच्चे वैष्णब का पता लगता है। शिष्य के द्वारा इस घटना को सुनकर पराशर बहुत प्रसन्न हुये। उसकी प्रशंसा में कहा कि "तुम्हारा बर्ताव आदर्श-पूर्ण रहा है। जब सच्चा वैष्णव अतिथि बनकर किसी के यहाँ रहता है, उसे चाहिये की किसी प्रकार अपने आतिथेय की इच्छा के विरुद्ध बर्ताव न करे। ऐसे शिष्यों पर गुरु गर्व कर सकते हैं।

जिस प्रकार तुलसी परिमल सहित बढ़कर वर्णित होता है, उसी प्रकार इस आदर्श शिष्य का भी वैष्णवत्व के साथ प्राकृत विकास हुआ है। स्वयं उत्तम वैष्णव होने पर भी, उसकी (परिभाषा) जानकारी भी उसे नहीं थी बाल-हृदय वाले थे। यही पूज्य रामानुज द्वारा वर्णित वैष्णवत्व है। वैष्णव स्वरूप है। ऐसा वैष्णव अपना सब भार भगवान के चरणों में समर्पित कर देता है और भगवत् भागवत् कैंकर्य में लगा रहता है। भगवान के प्रति उनकी भक्ति भी मात्र भगवान के मुखोल्लास हेतु होता हैं।

卐

गताँक से आगे—

# महाभारतामृतम्

पं० केशवदेव शास्त्री, वृन्दावन

卐

श्रीवेदव्यास जी द्वारा श्रीयुधिष्ठिर को कालक्रम की प्रबलता बताना। काल के माता पिता नहीं हैं। उसका किसी पर भी अनुग्रह नहीं होता। काल ही प्रजावर्ग के कर्मों का साक्षी है। काल ने ही तुम्हारे शत्रुओं का संहार किया है। काल ने इस युद्ध को निमित्त मात्र बनाया है। वह जो प्राणियों द्वारा ही प्राणियों का वध करता है, वही उसका ईश्वरीय रूप है। काल ही जीव के पाप-पुण्य कर्मों का साक्षी है। वह कर्म की डोरी का सहारा लेकर भविष्य में होने वाले सुख और दुःख का उत्पादक होता है। वही कर्मों का फल देता है। तुम अपने आचार-व्यवहार पर भी ध्यान दो तुम सदा ही उत्तम व्रत के पालन में लगे रहते थे किन्तु फिर भी विधाता ने तुम्हें अपने अधीन कर तुमसे ऐसा निष्ठुर कर्म करवा लिया। देखो, यह सारा जगत् कालयुक्त कर्म की प्रेरणा से ही सचेष्ट हो रहा है। प्र णी किसी व्यक्त कारण के बिना ही दैवात् उत्पन्न होता है और दैवेच्छा से ही अकस्मात् इसका विनाश हो जाता है। भिर भी तुम्हारे चित्त में उन सब को मरवाने के कारण झूठे ही चिन्ता हो रही, है इसके लिये तुम्हें प्रायश्चित्त कर लेना आवश्यक है। हे पार्थ! देवासुर संग्राम में बड़े भाई असुर और छोटे भाई देवता आपस में लड़ गये थे। वे भी राज्यलक्ष्मी के लिये ही बत्तीस हजार वर्षों तक लड़े थे। देवताओं ने दैत्यों का संहार कर स्वर्ग लोक पर अधिकार कर लिया। देवताओं ने तीनों लोकों में शालावृक नामक उन अट्ठासी हजार ब्राह्मणों का भी वध कर डाला, जो वेदों के पारङ्गत विद्वान् थे केवल अभिमानवश होकर दानवों की सहायता के लिये उनके पक्ष में जा मिले थे। जो धर्मका विनाश चाहते हुये अधर्मके प्रवर्तक होरहे हों, उन दुष्टों का वध करना ही उचित है। जैसे देवताओं ने उदण्ड दैत्यों का वध कर डाला था। यदि एक पुरुष को मार देने से कुटुम्ब बच जाय और एक कुटुम्ब के नाश करने से सारे राष्ट्र में सुख शान्ति हो तो वैसा करना सदाचार या धर्म का नाशक नहीं है। धर्मराज! किसी समय धर्म ही अधर्मरूप होजाता है और कहीं अधर्म-रूप दीखने वाला कर्म ही धर्म बन जाता है। अतः इस विषय में अच्छी तरह समझ लेना चाहिये। तुमने तो उसी मार्ग का अनुसरण किया है जिस पर देवता चले हैं। तुम अपने भाइयों को आश्वासन दो। जो पुरुष हृदय में पाप की भावना रखकर किसी पाप कर्म में प्रवृत्त होता है, उसे करते हुये उसी भावना से भावित रहता है और पाप-कर्म करने के बाद लज्जित नहीं होता, उसमें वह सारा पाप प्रतिष्ठित होजाता है, ऐसा शास्त्र का कथन है। उसके लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं है। तुम्हारे मन में युद्ध की इच्छा का लेश भी नहीं था। शत्रुओं के अपराध से ही तुम्हें युद्ध करना पड़ा फिर भी तुम पश्चाताप ही कर रहे हो, इसके लिये अश्वमेध यज्ञ ही प्रायश्चित्त है। उसे करने पर तुम पाप रहित होजाओगे।

मरुद्गणों सहित इन्द्र ने सौ अश्वमेध यज्ञ किये। इससे वे शतक्रतु कहलाये। तुमने भी अपने पराक्रम से इस पृथ्वी को प्राप्त किया है। तुम भी अपने पुत्र पौत्रों सहित पृथ्वी का पालन करो। धर्म का पालन करो जो धर्म मृत्यु के पश्चात् सबका कल्याण करने वाला है।

व्यास जी ने युधिष्ठिर के पूछने पर बताया कि जो मनुष्य शास्त्रविहित कर्मों का आचरण न करके निषिद्ध कर्म कर बैठता है वह प्रायश्चित्त का भागी होता है। जो ब्रह्मचारी सूर्योदय अथवा सूर्यास्त के समय सोता है तथा जिसके नख और दांत काले हों, उन सबको प्रायश्चित्त करना चाहिये। बड़े भाई के अविवाहित रहते हुये विवाह करने वाला छोटा भाई "परिवेत्ता" कहलाता है। परिवित्ति=परिवेत्ता का बड़ा भाई, ब्रह्महत्यारा, दूसरों की निन्दा करने वाला, छोटी बहिन के विवाह के बाद उसीकी बड़ी बहिन से विवाह करने वाला, जेठी बहिन के अविवाहित रहते हुये ही उसकी छोटी बहिन से विवाह करने वाला, जिसका व्रत नष्ट होगया हो वह ब्रह्मचारी, द्विज की हत्या करने वाला, अपात्र को दान देने वाला, सुपात्र को दान न देनेवाला, ग्राम का नाश करने वाला, माँस बेचने वाला, आग लगाने वाला, वेतन लेकर वेद पढ़ाने वाला, स्त्री और शूद्र का वध करने वाला, इनमें पीछे वालों से पहले वाले अधिक पापी हैं, तथा पशु वध करने वाला, दूसरों के घर में आग लगाने वाला, झूठ बोलकर पेट पालने वाला, ये पापी है, इन्हें प्रायश्चित्त करना चाहिये।

अब लोक और वेद विरुद्ध अकर्मों को सुनो—अपने कर्म को त्याग देने वाला, दूसरे के धर्म का आचरण करना, यज्ञ के अनधिकारी को यज्ञ कराना,अभक्ष्य भक्षण करना, शरणागत का त्याग करना, भरण करने योग्य का भरण-पोषण न करना, रस वेचने वाला, पशुपक्षियों को मारने वाला, शक्तिरहते हुये भी अग्न्याधान आदि कर्मों का न करना, नित्यकर्म सन्ध्योपासन, गोग्रास कर्म न करनेवाला, ब्राह्मणों को दक्षिणा न देना, उनका सर्वस्व छीन लेना, ये सब कर्म न करने योग्य हैं। जो पुरुष पिता के साथ झगड़ा करता है, गुरु की शय्या पर सोताहै, ऋतुकाल में भी अपनी पत्नी के साथ समागम नहीं करता है, ऐसे मनुष्य अधार्मिक होते हैं।

किन आचरणों के करने से मनुष्य पापसे लिप्त नहीं होते सुनो—यदि युद्धस्थल में बेद वेदाङ्गों का ज्ञाता ब्राह्मण भी हाथमें हथियार लेकर मारने के लिये आये तो स्वयं भी उसको मारडालने की चेष्टा करे। इससे ब्रह्महत्या का पाप नहीं लगता है। जो ब्राह्मणोचित आचार से भृष्ट होकर आततायी बन गया हो,—हाथ में हथियार लेकर मारने आरहा हो, ऐसे ब्राह्मण को मारने से ब्रह्महत्या का पाप नहीं लगता। क्रोध ही उसके क्रोध का सामना करता है। अनजान में अथवा प्राण-संकट के समय भी यदि मदिरा-पान करले तो बाद में धर्मात्मा पुरुषों को अज्ञानानुसार उनका पुनः संस्कार करना चाहिये। गुरु की आज्ञा से उन्हीं के प्रयोजन की सिद्धि के लिये गुरु की शय्या पर शयन करना दूषित नहीं है। चोरी करना सर्वथा निषिद्ध है किन्तु आपत्तिकाल में गुरु के लिये चोरी करना दूषित नहीं है। आपत्ति के समय ब्राह्मण के सिवा किसी अन्य का धन लेने वाला और चोरी का अन्न न खाने वाला चोरी दोष से लिप्त नहीं होता है। अपने या दूसरे के प्राण बचाने के लिये, गुरु के लिये एकान्त में अपनी स्त्री के साथ विनोद करते समय, या विवाह के प्रसंग में झूठ बोलने से पाप नहीं लगता है। यदि किसी कारण से स्वप्न में वीर्य स्खलित होजाय तो ब्रह्मचारी को दुवारा उपनयन संस्कार कराने की आवश्यकता नहीं है। इसके लिये प्रज्वलित अग्नि में घी का हवन करना प्रायश्चित्त है। यदि बड़ा भाई पतित हो जांय या संन्यास लेले तो छोटे भाई को विवाह कर लेना चाहिये। सन्तान प्राप्ति के लिये स्त्री द्वारा प्रार्थना करने पर यदि किसी परस्त्री के साथ संगम कर लिया जाय तो वह धर्म लोप करने वाला नहीं होता है। व्यर्थ ही पशुओं का वध न करे और न करावे। विधि-पूर्वक किया हुआ पशुओं का संस्कार उन पर अनुग्रह हैं यदि अनजान में अयोग्य ब्राह्मण

को दिया दान और योग्य ब्राह्मण को सत्कार पूर्वक न दिया दान दोषकारक नहीं होता है। व्यभिचारिणी स्त्री का यदि तिरस्कार किया जाय तो वह दोष की बात नहीं, उससे स्त्री की शुद्धि होती है और पति भी दोष का भागी नहीं होता। सोमरस के तत्व को जानकर यदि उसका विक्रय किया जाय तो बेचने वाला दोष का भागी नहीं होता। सेवक काम करने में असमर्थ हो जाय तो उसे छोड़ देने से भी दोष नहीं लगता। गौओं की सुविधा के लिये जंगल में आग लगायी जाय तो उससे पाप नहीं है।

हे पार्थ! मनुष्य तप, यज्ञ आदि सत्कर्मों से पाप को धोकर स्वयं को पवित्र कर लेता है परन्तु वह तभी संभव है जब वह फिर पाप में प्रवृत्त न हो। **ब्रह्महत्या**—का प्रायश्चित है कि कर्ता भिक्षा माँगकर एक समय भोजन करे। अपना सब काम स्वयं ही करे। हाथ में खप्पर और खाट का पाया लिये रहे। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करे। उद्यमी रहे। किसी के दोष न देखे। जमीन पर सोये। अपने पाप कर्म को प्रकट करता रहे। इस प्रकार बारह वर्ष तक करने से ब्रह्महत्या से पापमुक्त हो जाता है अथवा -विद्वानों की या अपनी इच्छा से शस्त्रधारी पुरुषों के शस्त्रों का निशाना बन जाय, या जलती आग में स्वयं को झोंक दे, या नीचे सिर किये किसी भी एक वेद का पाठ करते हुए तीन बार सौ-सौ योजन की यात्रा करे, किसी वेदज्ञ ब्राह्मण को अपना सर्वस्व समर्पण करदे, जीवन निर्वाह के लिये पर्याप्त धन या सामानों से भरा हुआ घर ब्राह्मण को दान करदे। इस प्रकार गौओं और ब्राह्मणों की रक्षा करने वाला पुरुष ब्रह्महत्या से मुक्त हो जाता है। यदि कृच्छ्व्रत करने वाला हो तो छः वर्षों में शुद्ध हो जाता है। एक एक मास में एक एक कृच्छव्रत का निर्वाहक तो तीन वर्षों में पाप मुक्त हो जाता है।

**कृच्छ्व्रत**—तीन दिन प्रातःकाल, तीन दिन सायंकाल, तीन दिन बिना माँगे जौ मिल जाय वह खा लेना तथा तीन दिन उपवास करना–इस प्रकार बारह दिन का कृच्छ्व्रत होता है, इसी क्रम से छः वर्ष तक करने से ब्रह्महत्या छूट जाती है। अश्वमेध यज्ञ करने से भी ब्रह्महत्या पाप से शुद्ध हो जाते हैं। वेद में वचन है कि 'सर्वं पाप्मानं तरति तरति ब्रह्महत्यां योऽश्वमेधेन यजते' इतिश्रुतिः। जो पुरुष ब्राह्मण के लिये युद्ध में प्राण दे देता है वह भी ब्रह्महत्या से छूट जाता है। गौओं का दान करनेवाले को समस्त पापों से छुटकारा मिलता है। जल हीन देश में पर्वत से गिरकर, अग्नि में प्रवेश करके, हिमालय में गलकर प्राण देने वाला मनुष्य सब पापों से मुक्ति पाता है। मदिरा पीने वाला 'वृहस्पतिसव' नामक यज्ञ करके शुद्ध होने पर ब्रह्माजी की सभा में जा सकता है। ऐसा वेद कहते हैं। गुरुपत्नी गामी पुरुष तपायी लोहे की शिला पर सो जाय अथवा अपनी मूत्रेन्द्रिय काटकर ऊपर की ओर देखता आगे बढ़ता चला जाय, शरीर छूटने पर वह उस पाप से मुक्ति पा जाता है। स्त्रियाँ भी एक वर्ष तक मिताहार एवं संयम से रहने पर उक्त पाप से मुक्त हो जाती हैं।

जो एक महीने तक जल न पीने का नियम ले पालन करता है, ब्राह्मणों को अपना सर्वस्व समर्पित करता है या गुरु के लिये युद्ध में मारा जाता है वह पापों से मुक्त हो जाता है। झूठ बोलकर जीविका चलाने वाला, गुरु का अपमान करने वाला पुरुष गुरुजी की मनचाही वस्तु देकर प्रसन्न कर ले तो उस पाप से मुक्त हो जाता है। परायी स्त्री या पराया धन अपहरणकर्ता पुरुष एक वर्ष तक कठोर व्रत का पालन करने पर उस पाप से मुक्त हो जाता है। जिसका धन अपहरण करे उसे उतना ही धन लौटा दे तो उस पाप से मुक्ति मिल जाती है। चौमासे में एक दिन का अन्तर देकर भोजन

करने का विधान है, उसके पालन करने से स्त्रियाँ शुद्ध हो जाती हैं। यदि अपनी स्त्री के विषय में पापाचार की आशंका हो तो पुरुष को चाहिए कि रजस्वला होने तक उसके साथ समागम नहीं करे। रजस्वला होने पर वह उसी प्रकार शुद्ध हो जाती है जैसे राख से मांजा हुआ वर्तन। पशुपक्षियों का वध एवं वृक्षोंका उच्छेद करने वाला पुरुष तीन दिन तीन रात केवल वायु पीकर रहे और अपना पाप कर्म लोगों को बताता रहे,जो स्त्री-समागम करने योग्य नहीं है उसके साथ समागमकर लेने पर छःमाह तक गीला वस्त्र पहन कर घूमना और राख के ढेर पर सोना चाहिए। पवित्र स्थान में रहने वाला, मिताहारी, अहिंसक, रागद्वेष से मुक्त, मान-अपमान से शून्य, गायत्री मन्त्र जापकर पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाता है। दिन में खड़ा रहे, रात में खुले मैदान में सोये, तीन वार दिन में और तीन वार रात में वस्त्रों सहित जल में घुस कर स्नान करे, उस समय स्त्री शूद्र पतितों से बात न करे ऐसा व्रत पालक अनजान में किये पापों से मुक्त हो जाता है।

मनुष्य के द्वारा किये गये शुभ और अशुभ कर्मों का फल मृत्यु के पश्चात् उसे प्राप्त होता है। उन कर्मों के पञ्चमहाभूत साक्षी होते हैं। अतः यदि किसी से अशुभ कर्म बन जाय तो दान, तप, तथा सत्कर्म के द्वारा शुभ कार्य की वृद्धि करे, अशुभ कर्म दब जाय। निष्काम भाव से दान करने से वह पापों से मुक्त हो जाता है। जानबूझ कर किया पाप भारी होता है। अनजान में वैसा पाप बन जाने पर कम दोष लगता है। प्रायश्चित भी उनके लिए हलके और भारी हैं। जो इस लोक और परलोक में सुख चाहता हैं, उसे श्रेष्ठजनों के आचार तथा उपदेशों का पालन करना चाहिये। राजन् युधिष्ठिर तुमने अपने प्राणों की रक्षा, धन की प्राप्ति अथवा राजोचित कर्तव्य पालन के लिए शत्रुओं का वध किया है। अतः इतने ही से तुम पाप मुक्त हो जाओगे। यदि तुम्हें अतीत घटनाओं के प्रति घृणा या ग्लानि हो तो उसके लिए प्रायश्चित्त कर लेना। परन्तु अनार्य जैसे खेद या रोष के वशीभूत हो आत्महत्या न करना।

युधिष्ठिर ने श्रीव्यासजी से पूछा—भगवन् ! भक्ष्य-अभक्ष्य तथा दान अदान के पात्र-अपात्र के बारे में बताइये। श्रीव्यासजी ने ऋषियों द्वारा मनुजी से जो पूछा गया, मनुजी ने जो उत्तर दिया वह सब राजा को सुनाया। मनुजी ने कहा—सुनो—जप, होम, उपवास, आत्मज्ञान, पवित्र नदियों में स्नान, और जप, होम, परायण, पुरुष रहते हों स्थान का सेवन यह समान्य प्रायश्चित्त है। ये कार्य पुण्य दायक हैं। पर्वत, सोने से स्पर्श कराये जल को पीना, रत्न मिश्रित जल से स्नान, देव स्थानों की यात्रा, घृतपान ये सब मनुष्य को शीघ्र ही पवित्र कर देते हैं। पुरुष को कभी गर्व नहीं करना चाहिए यदि दीर्घायु की कामना हो तो तीन रात तप्त कृच्छव्रत की विधि से गरम-गरम दूध, घृत और जल पीये।

बिना दी हुई वस्तु को न लेना, दान, अध्ययन, तप परायणता, किसी भी प्राणी की हिंसा न करना, सत्य बोलना, क्रोध का त्याग, यज्ञ करना, ये धर्म के लक्षण हैं। एक ही क्रिया देश और काल के भेद से धर्म या अधर्म हो जाती है, चोरी करना, झूठ बोलना, हिंसा करना आदि अधर्म भी अवस्था विशेष में धर्म माने गये हैं। देवताओं के निमित्त, शास्त्रीयकर्म, प्राण और प्राण दाता इन चारों की अपेक्षा पूर्वक जो कुछ किया जाता है उससे अशुभ का भी शुभ ही फल होता है। यदि क्रोध या मोह के वश में आकर मन को प्रिय या अप्रिय लगने वाला अशुभ कर्म हो जाय तो उसके लिए उपवास आदि से शरीर सुखाना ही योग्य प्रायश्चित है। हविष्यान्न भोजन, मन्त्र जप आदि से भी क्रोध के कारण किए गये पाप की शान्ति होती है। यदि राजा दण्डनीय पुरुष को दण्ड न दे तो उसे

एक दिन रात का का उपवास करना चाहिए, यदि ऐसे अवसर पर पुरोहित कर्तव्य का उपदेश नदे तो उसे तीन रात उपवास करना चाहिए। निन्द्यकर्म के लिए जो चेष्टा की गयी उस दोष निवृत्ति के लिए तीन रात का उपवास बताया गया हैं। जो अपने जाति कुल आश्रम के धर्मों का सर्वथा परित्याग करदे उसके लिए कोई भी प्रायश्चित्त नहीं है। यदि धर्म के निर्णय में सन्देह होने पर वेद-शास्त्रज्ञ ब्राह्मण दस या तीन जो निर्णय दें, उसे ही धर्म मानना चाहिये। श्लेष्मात्मक=लसौड़ा, विष, काटों रहित मत्स्य, कच्छप, अन्य चार पैर वाले सभी जीव, मेढ़क, जलज जीव, मांस, हंस, गरुड. चकवा, बतख, बगुला, कौए, मद्‌गु=जलचर पक्षी गीध, बाज, उल्लू हिंसक पशु, ये सब अभक्ष्य हैं। भेड़, घोड़ी, ऊँटनी, गदही दस दिन के भीतर की ब्याही गाय, मानवी स्त्री और हिरनियों का दूध ब्राह्मण न पीये। यदि किसी के यहाँ मरणाशौच या जननाशौच हो गया हो तो उसके यहां दस दिनों तक कोई अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिए राजा का अन्न तेज हर लेता है। शूद्र का अन्न ब्रह्म तेज को नष्ट करता है। सुनार का तथा पति और पुत्र से हीन युवती का अन्न आयु का नाश करता है। व्याज खोर का अन्न विष्ठा के समान है। वेश्या का अन्न वीर्य के समान है। यज्ञ दीक्षा ले ली हो उसका अन्न अग्निषोमीय होमविशेष के पहले अग्राह्य है, कंजूस, यज्ञ बेचने वाले, बढ़ई, चमार मोची, व्यभिचारिणी स्त्री, धोबी, वैद्य, चौकीदार का अन्न खाने के योग्य नहीं है। जिसे किसी समाज या गाँव ने दोषी टहराया हो, जो नर्तकी के द्वारा अपनी जीविका चलाते हों, छोटे भाई का व्याह हो जाने पर भी कुँबारे रह गये हों, चारण या भाट, जुआरी इन लोगों का अन्न भी ग्रहण करने योग्य नहीं है। बाँये हाथ से लाया अथवा परोसा गया अन्न, बासी भात, शराब मिला, जूठा, घर वालों को न देकर अपने लिए बचाया हुआ अन्न भी अखाद्य ही है। खीर, खिचड़ी, फल का गूदा और पूए यदि देवता के उद्‌देश्य से न बनाये गये हों उन्हें गृहस्थ ब्राह्मणों को नहीं खाना चाहिये। गृहस्थों को चाहिये वह देवताओं, ऋषियों, अतिथियों, पितरों घर के देवताओं का पूजन करके भोजन करे। यश के लोभ से, भय से, अपना उपकार करने वाले को दान न दे, वह दान नहीं है। श्रोत्रिय के सिवा वेद-ज्ञान शून्य ब्राह्मण को दान नहीं देना चाहिए। अविधि पूर्वक दान देने और लेने वाले दोनों ही डूब जाते हैं। तप, स्वाध्याय और सदाचार से हीन ब्राह्मण यदि दान ले ले तो वह उसे पचा नहीं सकता। जो ब्राह्मण वेदज्ञान से शून्य है लेकिन दूसरों में दोष नहीं देखता तथा सन्तुष्ट रहता है उसे तथा व्रतशून्य दीन को भी दया करके दान देना चाहिए। वेदविहीन ब्राह्मण, लकड़ी का हाथी, चाम का बना मृग ये नामधारी हैं, ये काम देने वाले नहीं होते। नपुंसक के पास स्त्री, गाय गाय से, पंख हीन पक्षी कोई फल नहीं देते। अन्न हीन गाँव, जल हीन कुँआ, राख में दी हुई आहुति व्यर्थ है वैसे ही मूर्ख ब्राह्मण को दिया दान भी व्यर्थ है। मूर्ख ब्राह्मण देवताओं के यज्ञ, पितरों के श्राद्ध को नष्ट करने वाला, वह धन अपहर्ता, दान देने वालों को उत्तम लोकों में नहीं पहुँचा सकता। यह प्रसङ्ग सबको सुनना, पढ़ना, मनन करना चाहिए।

(क्रमशः)

**गतांक से आगे—**

# अष्टश्लोकी व्याख्या

**आचार्य श्रीगुरुचरण मिश्र**

साहित्यमनीषी, ठकुराईपरसिया (रोहतास) बिहार

卐

व्याख्या—तथा च 'नित्योनित्यानां' 'एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः' 'अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिः' 'जानात्येवं पुरुषः' 'प्राप्यान्तं कर्मणस्तस्य यत्किञ्चेह करोत्ययम्' 'तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति' 'यस्यास्मिन् तमन्तरेमि' 'यस्यात्मा शरीरम्' रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति' 'विज्ञानं यज्ञं तनुते' निर्वाणमय एवाज्ञान मथोऽमलः' इत्यादि श्रुतिस्मृतिसिद्धनित्यत्वाणुत्व, स्वयं प्रकाशत्व, ज्ञातृत्व, कर्तृत्वभोक्तृत्व, परमात्मशेषत्व, तत्परतन्त्रत्वानन्दत्व गुणकत्व, ज्ञानानन्द स्वरूपत्व लक्षणमात्म शब्द प्रवृत्तिनित्यत्वम्, इति मकारस्यापि तादृशात्मवाचित्वमवर्जनीयम्।

'नमः शब्दे' इति षष्ठीविभक्तिरपि मकारादुत्पद्यते। 'आत्मा तु समकारेण' इत्यादि स्मृतौ आत्म शब्देन मकार कथनमपि अतीव स्वरसं भवति। इति।

अर्थ—अब श्रुति स्मृतियों के निश्चयानुसार आत्मन् शब्द का लक्षण कहते हैं। जो आत्मन् शब्द का अर्थ है, वही ओम् घटक (म्) का अर्थ है। जैसे 'नित्योनित्यानां चेतनश्चेतनानामेको वहूनां विदधाति कामान्।' जो एक नित्य चेतन परमात्मा बहुत नित्य चेतन जीवों की कामनाओं को परिपूर्ण करते हैं। यहाँ जीवात्मा का नित्यत्व लक्षण है। 'एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः' यह आत्मा अणु है चित्त से ज्ञातव्य है। यहाँ अणुत्व लक्षण है। 'अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिः' यहाँ एक पुरुष स्वयं ज्योति है। यहाँ स्वयं प्रकाशत्व लक्षण है। 'जानात्येवायं पुरुषः' निश्चयही यह पुरुष जानता है। यहाँ ज्ञातृत्व है—प्राप्यान्तं कर्मणस्तस्य यात्किञ्चेह करोत्ययम्। उसके कर्मों के परिणामों को प्राप्त कर यहाँ कर्म करता है। यहाँ ज्ञातृत्व है। 'तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति' ईश्वर और जीव दोनों में जीव स्वादिष्ट पिप्पल फलस्वरूप कर्मफल को खाता है। यह भोक्तृत्व लक्षण है। 'यस्यास्मिन्नन्तरेमि' जिसके अन्तर में उस (परमात्मा) को प्राप्त करना है। यहाँ परमात्म शेषत्व है। 'यस्यात्मा शरीरम्' जिस परमात्मा का शरीर जीवात्मा है यहाँ परतन्त्रत्व है,'रसंह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति'यह जीवात्मा रस स्वरूप परमात्मा को पाकर आनन्दी होता है। यहां आनन्दत्व गुणकत्व लक्षण है। 'विज्ञानं यज्ञं तनुते।' विज्ञान यज्ञ पुरुष को प्राप्त करता है। 'निर्वाणमय एवात्मा ज्ञानमयोऽमलः' आत्मा निर्वाण स्वरूप, ज्ञान स्वरूप और अमल है। यहाँ ज्ञानानन्दत्व स्वरूप लक्षण है।

इस प्रकार जीवात्मा का श्रुति स्मृतियों से सिद्ध, नित्यत्व, अणुत्व, स्वयं प्रकाशकत्व, ज्ञातृत्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्व परमात्मशेषत्व, परमात्मपरतन्त्रत्व आनन्द गुणकत्व, ज्ञानानन्द स्वरूपत्व, लक्षण एवं आत्मत्व ये आत्मन् शब्द के प्रवृत्तिनिमित्त अर्थ, ओम् घटक (म्) अक्षर का भी है। जो अत्याज्य है।

आगे नमः पद में न+मः ऐसा विच्छेद कर म्+ङ०स्, इस प्रकार (म्) शब्द से षष्ठी विभक्ति की उत्पत्ति होती है। (म्) जीव का अंश (अ) ईश्वर नहीं है, यह अर्थ होता है। 'आत्मातु समकारेण' इत्यादि स्मृति में आत्म शब्द से मकार का बोध करना भी अत्यन्त स्वरस होता है।

(यहाँ तक ओम् घटक 'म्' पद की व्याख्या समाप्ति हुई)

**अब तदुपकरण पद की व्याख्या प्रारम्भ होती है :—**

मूले—'तदुपकरणं वैष्णवम्। (इस अंश की व्याख्या)।

व्याख्या—अथ अकारोपस्थितां लुप्त तादर्थ्यं चतुर्थीं व्याचष्टे। 'तदुपकरणं वैष्णवमिति'। विष्णोर्जातं वैष्णवमिदं मकारपद वाच्य मात्मवस्तु। उपकरण शब्दापेक्षया नपुंसक निर्देशः तदुपकरण मिति। तस्याकारस्य विष्णोरूपकरणम् शेषभूतम्। वैष्णवमित्यनेन विशेषणेन जीवस्य भगवच्छेषत्वे हेतुरुच्यते।

अर्थ—ओम् पद में (अ) विष्णु वाचक है। उसी विष्णु अर्थ में (अ) शब्द से चतुर्थी विभक्ति आती है, उसका 'सुपांसुलुक्' (पा० सू०) से लोप हो जाता है। केवल (अ) शिष्ट रहता है। लुप्यमान अर्थ को लेकर 'आय, म्' ऐसा विग्रह वाक्य होगा। विष्णु के उद्देश्य से उनका शेष 'म्' जीव है। यह अर्थ है।

मूल में 'तदुपकरणं वैष्णवमिति।' विष्णु का जात (अंश) है। वह वैष्णव पदवाच्य है। वह मकार का अर्थ है। वही आत्म वस्तु है। 'उपकरणमिति' उपक्रियतेऽनेन इति उपकरणम्। (अ) विष्णु का उपकरण, साधन एवं शेष जीवात्मा है। जीव शब्द पुलिंग है। तो उसका विशेषण उपकरण शब्द नपुंसक है। उसके अनुसार वैष्णव शब्द में भी नपुंसक लिंग है। स्पष्टार्थ है, कि अकार का अर्थ विष्णु है। उनका उपकरण=शेष भूत जीव है। 'वैष्णवम्' यह विशेषण जीव का भगवत्शेषत्व होने में हेतु है।

व्याख्या—'सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलान् इति शान्त उपासीत।' 'मत्तः सर्वंमहं सर्वम्' इत्यादि श्रुति स्मृतिषु तज्जत्व, तल्लत्व, तदनत्वैतच्छेषत्व प्रतिपादनात्। यथाकस्मिश्चिच्क्षेत्रिणि किञ्चिच्क्षेत्रं कर्षति, वपति, पालयति, कृन्तति च सति तमन्यो दृष्ट्वा 'अयमस्य क्षेत्रस्य स्वामीति निश्चिनोति। तद्वत् जगत्सृष्टि स्थिति संहारै व्यापारैरयं जगच्छेषीति निश्चेतुं शक्यमित्येतदर्थं प्रतिपादक द्रविडोपनिषद् भाष्यकारसूक्तिदर्शनाच्च।

अर्थ—सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत (छा० उ० प्रसा० ३ ख, १४।श्रु० १) इदं ब्रह्म सर्वं खलु। परब्रह्म सर्व शारीरक है, अर्थात् सर्वात्मक है। क्योंकि यह जगत् तत्+ज, उस ब्रह्म से प्रकट हुआ है। तत्+ल, उस ब्रह्म में लीन होता है। और तत्+अत्, उस ब्रह्म से प्राण धारण करता है। 'मत्तः सर्वम् अहं सर्वम्' मुझ (ब्रह्म) से सब उत्पन्न है। मैं (ब्रह्म) ही सब कुछ हूँ। इत्यादि श्रुतियों और स्मृतियों में ब्रह्म का शेषत्व जगत् में है। जो जिसका शेष (अंश) होगा, वही उससे उत्पन्न, उसमें लीन और उससे पालित होगा। अतः सिद्ध है, कि ब्रह्म का शेष जीवात्मा है।

उदाहरण—जैसे क्षेत्र में उसका स्वामी उस क्षेत्र को जोतता है। बीज बोता है, रक्षा करता है और काटता है। अन्य व्यक्ति उसको और उन कार्यों को करते हुए देखकर निश्चय करता है, कि

यह कृषक इस क्षेत्र का स्वामी है। उसी प्रकार जगत् की सृष्टि, स्थिति, और संहार के व्यापारों से यह निश्चय होता है—यह ब्रह्म (श्रीमन्नारायण) जगत् का शेषी (अंशी) है। इस अर्थ का प्रतिपादन द्रविड उपनिषद् के भाष्यकार की सूक्तियों श्रीभाष्यादि को देखने से भी परमात्मा का शेषित्व सिद्ध होता है।

व्याख्या—'न चैवं न जायते म्रियते वा विपश्चित्' अजोनित्यः शास्वतोऽयं पुराणः।' नात्मा श्रुतेर्मित्यत्वाच्चे ताभ्यः' इत्यादि श्रुतिस्मृतिन्याय विरोधः। तत्र वियदादेरिव नामान्तं भजनार्हं स्वरूपान्यथाभावात्मकोत्पत्त्यादि रेव प्रतिषेधात्। ज्ञानसंकोच विकासात्मक स्वभावान्यथापत्ति रूप-कार्यस्य स्वरूप नित्यत्वाविरोधित्वात्। यथा चैतत्तथा शारीरकभाष्ये स्फुटम्।

अर्थ—यदि ऐसा कहें, कि 'न जायते म्रियते वा विपश्चित् नायं कुतश्चिन्न वभूवक श्चित्। अजो नित्यः शास्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे' (कठ० व० २ श्रु० १८) नित्य ज्ञानवान् आत्मा न तो जन्मता है, और न मरता ही है। न तो स्वयं किसी से हुआ है, न कोई इससे हुआ है। अर्थात् न किसी का कार्य है, न कारण है। यह अजन्मा नित्यशास्वत और पुराण है। अर्थात् क्षयवृद्धि से रहित है। शरीर को नष्ट किये जाने पर भी नष्ट नहीं किया जा सकता है। तथा 'नात्माश्रुतेर्नि-त्यत्वाच्च ताभ्यः' (ब्रह्मसूत्र २।३।१९) आत्मा=जीवात्मा ने—वास्तव में उत्पन्न नहीं होता। च= और ताभ्यः=श्रुतियों से ही नित्यत्वात्=इसकी नित्यता सिद्ध की गयी है। इसलिए भी जीवात्मा की उत्पत्ति नहीं मानी जा सकती है। इत्यादि श्रुतिस्मृति और न्याय से विरोध होता है। क्योंकि जब जीवात्मा ब्रह्म का शेष एवं अंश मानेगें, तो अजन्मा, नित्य, शास्वत, पुराण और जन्ममरण से रहित कैसे हो सकता है।

तब इसका समाधान यह है, कि 'ब्रह्मसूत्र' नवियदश्रुतेः (ब्र० सू० ३।३।१) इस सूत्र में वियत्=आकाश, न=उत्पन्न नहीं होता है। अश्रुतेः=क्योंकि छन्दोग्य उपनिषद् के सृष्टि प्रकरण में उसकी उत्पत्ति नहीं सुनी गयी है। (छा०उ० ६।२।१ से ६।३।४ तक) वहाँ आकाश की उत्पत्ति का कोई प्रसङ्ग नहीं है। आकाश विभु (व्यापक) है, नित्य है। इसके उत्तर में 'अस्तितु' (ब्र०सू० २।३।२) में तु=किन्तु (दूसरी श्रुति में) अस्ति आकाश की उत्पत्ति का शारीरक भाष्य में स्पष्ट वर्णन है। तैति-रीयोपनिषद् में—ब्रह्म सत्यज्ञान स्वरूप और अनन्त है, इस प्रकार ब्रह्म का लक्षण बताकर उसी में आकाश की उत्पत्ति बतायी गयी है।

तस्माद्वा एतस्मादात्मनः आकाशः सम्भूतः आकाशाद्वायुः, वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी' (तै० उ० २।१।१) इस प्रकार वेद में आकाश की उत्पत्ति का भी वर्णन है। 'गौणसम्भवात ?' (ब्र० सू० २।३।३) असंभवात्=आकाश की उत्पत्ति असंभव होने के कारण आकाश की उत्पत्ति (तै० उ०) में कही गयी है। वह गौणी है। 'शब्दाच्च' (ब्र० सू० २।३।४) शब्दात्=शब्द प्रमाण से भी आकाश उत्पन्न नहीं होता।

इस पूर्व पक्ष का खण्डन इस प्रकार है—'स्याच्चैकस्य ब्रह्मशब्दतत्' (ब्र० सू० २।३।५) च= तथा ब्रह्मशब्दवत्=ब्रह्मशब्द की भाँति, एकस्य=किसी एक शब्द का प्रयोग, स्यात्—गौण भी हो सकता है।

卐

(क्रमशः)

# आशा

चारों ओर घिरी दावानल, भीतर-बाहर है कोलाहल;
किस आशा को लिए प्राण ! तुम, अब भी चाह रहे हो जीना ?

जो भी पुण्य कमाये, वे सब-
खुद हो पापों को दे डाले;
जो वरदान मिले थोड़े से,
वे अभिशापों को दे डाले;
सबको शृङ्गारित रखने में,
किया दिगम्बर-वेष स्वयं का;
अवसर मिले हँसी के जितने,
वे सन्तापों को दे डाले;

मन में घुटन, नयन में पानी; आहें भरती रही जवानी;
रोम-रोम अकुलाया, फिर भी, त्यागा नहीं जहर का पीना ?

ज्वालामुखियों के आँगन में,
स्वर्गिक-कल्पवृक्ष को ढूँढा
नागफनी के जंगल में जा,
मोहक मोर-पक्ष को ढूँढा;
घोर अमा के अन्धकार से,
चन्द्र-किरण की भिक्षा मांगी;
हिंसक जीवों की बस्ती में,
अभिनव शान्ति-कक्ष को ढूँढा;

चल कर देखीं जितनी राहें, उतनी पाईं अधिक कराहें;
जिसके आगे कर फैलाये उसने बढ़ कर सब कुछ छीना !

यह दुनियाँ बेपीर, यहाँ पर,
जपते सभी स्वार्थ की माला;
सब नाते केवल दिखावटी,
सबका हृदय यहाँ है काला;
जो तप का प्रतिदान दे सकें-
ऐसे लोग न ढूँढे मिलते;
अपनेपन का मिथ्या-सम्भ्रम,
क्यों फिर जान-बूझ कर पाला ?'

अब तो उठा यहाँ से डेरा, बहुत हो लिया रैन-बसेरा;
बन्धन हटें मोह-माया के, तो फिर बजे मुक्ति की वीणा !
किस आशा को लिये प्राण ! तुम अब भी चाह रहे हो जीना !

रचनाकार—
कविवर राजेशजी दीक्षित
महाविद्या, मथुरा

**सन्त श्रीमुरारी बापूजी के प्रवचन से :—**

# नवनीत प्रिय श्रीकृष्ण

प्रस्तुति–सुश्री शुभलक्ष्मी शर्मा, दिल्ली

卐

कृष्ण नाम का क्या अर्थ है आपको बता दें। कर्षति इति कृष्णः इतना अर्थ आया है संस्कृत में। कर्षति इति कृष्णः, जो दूसरों को अपनी ओर खींचता है उसका नाम कृष्ण है। दूर-दूर से अपनी ओर खींच लेता है भक्तों को, उसका नाम है कृष्ण। कर्षति इति कृष्णः, खेंचता है, जैसे चुम्बकत्व अपनी ओर खींचता है। तुम थोड़े करीब भी जाओ वह खींचेगा तुम्हें, खींच लेगा अपने साथ जोड़ देने के लिए। दूसरी व्याख्या है, 'कृष्यति इति कृष्णः' कृषि शब्द आया है खेती से, जैसे वीरान खेत है उसमें कोई बीज वो देता है, कृषि कर देता है वीरान हृदय में जो प्रेम का बीज बो देता है उनका नाम है कृष्ण। कर्षति इति कृष्णः तुम्हारे वीरान हृदय में; वीरान अन्तः करण में जो गद्-गद् भाव प्रगट करवा दे। जो प्रेम की गंगा वहा दे वह कृष्ण है। इनसे जुड़ जाओ। रोज तुम्हारा बढ़े, थोड़ा बढ़े, भले कम मात्रा में, तो वह खींचेगा तुम्हें।

कृष्ण को माखन क्यों अच्छा लगता था, सोचा है आपने। माखन क्यू खाता था कृष्ण ? और क्या घर में माखन कम था। यशोदा के घर में कम था, पूरे व्रज को खिला सके इतनी गायें थी। लेकिन क्यू ? गोपियों के घर से मक्खन खाता था। मक्खन का एक नाम है संस्कृत में नवनीत। नवनीत का शब्दार्थ है संस्कृत में जिसका नित नूतन भाव है उनका नाम है मक्खन, नवनीत। वैष्णव सम्प्रदाय में भगवान का एक नाम है नवनीत प्रियाणि। नवनीतप्रिया, नव यानि नूतन, नवीन, नीत याने कायम। यो नित्य नूतन भाव है वही गोपियों से पाने के लिए कृष्ण जाता था। घर-घर में। नवनीत। 'सुरम्य नवम् नवम्वदेत' ऐसा भागवत पाठ में आता है। रोज जो नूतन लगता है। रुपमय लगता है, सुरम्य लगता है, सुन्दर लगता है, रोज नूतन भाव है उसी भाव के कारण कृष्ण वहाँ जाता है। नवनीत का अर्थ है नित नूतन नया भाव। आज गोपी ने आंगन लीपा है, आज माखन को दूसरे पात्र में रखा है, आज मोरपंख तैयार किया है, आज कृष्ण के लिए यह तैयारी की है वह तैयारी की है। यह जो नित नूतन भाव है उसको मक्खन कहते हैं और कृष्ण को मक्खन प्रिय था उसका एक कारण आप जानते होंगे। मक्खन एकदम द्रवीभूत हो जाता है। पिघल जाता है। कृष्ण को वह प्रिय है जो उनका नाम सुनकर उनके नाम का स्मरण करते ही द्रवित हो जाए, द्रव उठे। दूसरों का कष्ट सुनकर जिसका दिल द्रवित होता है वहीं कृष्ण का मक्खन है।

मक्खन के दो रङ्ग होते हैं। गाय का मक्खन तो करीब-करीब पीले रङ्ग का होता है और भैंस का हो तो शुभ्र होता है। इसका मतलब भगवान को शुभ्र उज्ज्वल जीवन अच्छा लगता है और केसरी जीवन, त्याग वाला जीवन, वैराग्य वाला जीवन, भोग से मुक्त जीवन उसकी कृष्ण चोरी करता है उसको खींचता है। और आपने उस पर संशोधन किया होगा, यदि नहीं जाना हो तो कृपया किसी डाक्टर से पूछ लीजिएगा। यहाँ तो डाक्टरों से क्या अभिप्राय है मुझे पता नहीं, लेकिन मेरे भारत के वैद्यों की वात आपसे कहता हूँ। घी शायद कई लोगों को पचता नहीं लेकिन मक्खन न

पचे ऐसा नहीं हो सकता । घी कई लोगों को नहीं पचता । कई लोग घी नहीं पचा पाते लेकिन मक्खन पच जाता है । यह नियम है । भगवान श्रीकृष्ण उस चीज को स्वीकार करते हैं जो सर्वग्राही है, सर्वथा पाचक है, सबको तन्दुरुस्ती देने वाला है, नवनीत बड़ा प्यारा शब्द है ।

गोस्वामीजी रामचरितमानस में इस शब्द का प्रयोग करते हैं 'सन्त हृदय नवनीत समाना' नवनीत बड़ा प्यारा शब्द है । इसका सीधा-साधा अर्थ है जो नित नवीन हो । रोज नया है, सुन्दर है, और ध्यान देना जिसके प्रति आपके मन में नित नया भाव उठे तो समझना उसे परमात्मा की कुछ कलायें आ गयी हैं । ईश्वर के अवतरण में करीब-करीब वह ईश्वर को पा चुका ऐसा आदमी है । जिसके चरणों में जिसके प्रति आपका नित नूतन भाव हो, समझना कुछ मात्रा में हरी की कलायें उतर आयी हैं ।

सिद्ध पुरुषों को देखना वे होंगे बड़े प्रकाण्ड विद्वान, लेकिन रहेंगे बालकों की तरह, बच्चों की तरह । सिद्ध पुरुष सोयेगा तो लगेगा कोई बालक सो रहे हैं, कोई बच्चा सो रहा है । उसकी चाल में कोई कृत्रिमता नहीं होती है जैसे गंगा बह रही है । किसी का कल्याण करने के लिए किसी के आंगन में गंगा जा रही है, ऐसी उनकी चाल होती है । उनकी आंखे होती हैं सुबह का सूरज । और शरद का चन्द्र उनकी आँखे होती हैं । सुबह का सूरज जो कमल को विकसित करता है ज्ञान और विवेक को जागृत करता है, दृष्टि आयी गोचरा, खेंचरा कोई भी सामने आया तो उसकी कुण्डिलिनी जागृत कर दे । इसलिए महापुरुषों का संग करो, ऐसे महापुरुषों के संग में रहो ।

तो सब में हरिदर्शन, रागद्वेष से मुक्ति और प्रभु से जुड़ जाना मोक्ष है । धर्म में कर्त्तव्य बुद्धि आ जाये । अर्थ में निर्लोभीपना आ जाये । काम में अनाशक्ति आ जाये । सब में भगवत दर्शन का भाव आ जाये । ऐसा जीवन सौ साल जियो । 'जिजीविषेत् शतम्समा:' जीने की इच्छा और जानने की इच्छा । दूसरी इच्छा को जानने की इच्छा को जिज्ञासा कहते हैं । जानो यहाँ आये हो तो जानो । सन्तों से, सद्गुरुओं से, शास्त्रों से जानो । इसको जिज्ञासा कहते हैं । और सुख की इच्छा । लेकिन यहाँ एक बात के लिए सावधान रहना पड़ेगा पदार्थों के सुख की इच्छा नहीं, आनन्द के सुख की इच्छा । क्योंकि वेदान्त में ऐसा पाठ आया है कि सद्वृत्ति से सुख की इच्छा होती है । क्योंकि सत् चित्त आनन्द स्वरूप है जीव भी । यही उसका मूल स्वरूप है । सद्वृत्ति से ही जीने की इच्छा होती है । चित्तवृत्ति से जानने की जिज्ञासा होती है और आनन्दवृत्ति से सुख की इच्छा होती है ।

पदार्थों का सुख नहीं, आनन्द का सुख । पदार्थों का सुख भी तो है लेकिन नाशवंत है पदार्थ छूटने पर, रुला देता है । आनन्द का सुख । आनन्द स्वरूप का सुख । तो ये जो आशायें हैं, ये जो इच्छायें हैं 'आशा पाशशतैर्बद्धा कामक्रोधः ।' जिसको अपनी कोई इच्छा नहीं है, कोई आशा नहीं है वह दास है और दास, 'राम ते अधिक राम कर दासा ।' हरि को तो कम प्रकट होने के लिए निज इच्छा होती है लेकिन भक्त को तो निज इच्छा भी नहीं होती, हरि इच्छा भावी बलवान, हरि इच्छा, मेरे ठाकुर की इच्छा वह जो चाहे करे तो यह पहली चौपाई । आप सब एक बार पाठ कर लें ।

**मोरे मन प्रभु अस बिश्वासा, राम ते अधिक राम कर दासा ॥**

卐卐
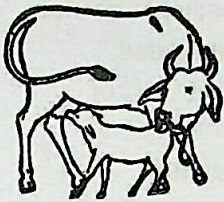
# गाय विश्व की माता हैं

प्रस्तुति—आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा
श्रीधाम वृन्दावन

卐

**'गावो विश्वस्य मातरः'** माँ शब्द बड़ा ही हृदयस्पर्शी होता है, और माँ कभी भी अपने बच्चों को न तो कष्ट देती है और नहीं कष्ट में देख सकती है। यह हमारी प्राकृतिक धन गौ माता अपने इस दायित्व को अपने शरीर के प्रत्येक अङ्ग द्वारा पूर्ण करने के लिए हर क्षण प्रस्तुत रहती है। कमी तो स्वयं हमारी है जो हम उसे सम्मान न देकर उसके द्वारा प्रदत्त अनेकों निःशुल्क उपहारों से वंचित रहते हैं। और आधुनिक डाक्टरों (यमराजसहोदरः) के चक्कर में पड़कर अपने शरीर को तथाकथित डाक्टरों की प्रयोगशाला बना लेते हैं। तन और धन दौनों ही खो देते हैं। अभी भी वक्त है, हम अपनी प्राचीन दिव्य परम्पराओं को अपनाकर अपने जीवन को निरोग बनाकर स्वस्थ जीवन जी सकते है।

हमें चिन्ता ही नहीं चिन्तन भी करना होगा अपने गौरवशाली अतीत के लिये गाय हमारी अमूल्य धरोहर है। उसकी रक्षा के उपाय करना हमारा नैतिक कर्तव्य और धर्म है। हम यहाँ पर गाय मूत्र के प्रयोग द्वारा कितने ही रोगों से मुक्ति प्राप्त कर सकतें हैं, इसकी आपको जानकारी दी जा रही हैं। आगामी अङ्क में और भी जानकारियाँ आपको प्राप्त होंगीं।

## गौ मूत्र के सेवन से नष्ट होने वाले रोग :—

१- अग्निमांद्य Dyspepsia (भूख की कमी)
२- अजीर्ण Indigestion
३- अन्त्र वृद्धि Hernia
४- अन्त्र वृद्धि शोध (एपेन्डीसायटीस).
५- अन्तस्त्राव ग्रंथिविकृति Disorder of ductlessglands
६- अन्त्रपुच्छ प्रदाह Apendicities
७- भ्रम (चक्कर आना) Vertigo
८- अर्बुद Tumour
९- अष्ठिला Prostate
१०- अस्थिभङ्ग Bone Fracture
११- अहिफेन विष Opium Poison
१२- आनाह (बद्धकोष्ठता) constipation
१३- आमशय व्रण Peptic Ulcer
१४- अतिसार (दस्त) Diarrhoea
१५- अम्लपित्त (एसीडीटी) Acidity
१६- अपस्मार (मिर्गी) Epilipsy
१७- आरोचक Anorexia
१८- अर्श (बवासीर) Piles
१९- अश्मरी Calculus
२०- प्रमेह Diabetes
२१- आध्मान (आफरा) Flatuence
२२- आमवात Rhematism
२३- उदर रोग Disorder of Stomach
२४- उदावर्त (गैस) Gasses
२५- प्रमेह (पीडीका) Carbunete

२६- पाण्डु Anemia
२७- पित्त वृद्धि
२८- बद्ध कोष्ठ Constipation
२९- मदात्यय Alcoholism
३०- मुख रोग Mouth Diseases
३१- मूत्रकृच्छ-मूत्रधात Dysurea
३२- मेदो वृद्धि Obesity
३३- रक्त दवाब वृद्धि HBP
३४- रक्त विकार Blood Impurity
३५- उपदंश (गर्मी) Syphlis
३६- उरस्तभ
३७- कब्ज Constipation
३८- कर्णरोग Ear Disease
३९- कामला Jaundice
४०- गुल्म Colic
४१- बुद्धिमान्ध्य (स्मृतिनाश)Loss of Memory
४२- भगन्दर Fistula
४३- दन्तरोग Dental diseases
४४- दाह Int. Heat
४५- निद्रानाश Insomania
४६- नेत्ररोग Eye diseases
४७- प्रतिशाय (जुकाम) coriza
४८- वमन (कै) Vomiting
४९- बात रोग Vaat Roga
५०- विर्चाचिका Eczyma
५१- विरेचना देना
५२- विसुचिका (हैजा) cholera
५३- वृक्क विकार Kidney Diseases
५४- ज्वरातिसार Fever+diarrhoea
५५- त्वचारोग Skin-disease
५६- शिरः शूल Headache
५७- प्रभाभात (लू लगना) Sun Stroke
५८- प्रवाहिका Dysentry
५९- पामा (खुजली) Eczyma
६०- प्लीहा वृद्धि Enlargement of Spleen
६१- बहुमूत्र Poly-urea
६२- मसूरिका (रोमान्तिका) Measules
६३- मुर्च्छा Unconciousness
६४- मूत्रवाहिनीमेव्रण Ureterulcer
६५- यकृत वृद्धि Liver
६६- रक्त पित्त Haemorrhea
६७- उन्माद Insanity
६८- उररतोय Plurisy
६९- कण्ठरोग Scroffula
७०- कुष्ठरोग Leprosy
७१- कृमि Worms
७२- कास Cough
७३- बालरोग Infantile Disease
७४- भस्मक
७५- दद्रु Ring Worm
७६- धातुक्षीणता Sex Dedility
७७- नासारोग Nasal diseases
७८- पलित (बाल सफेद होना)
७९- रक्तस्त्राव Haemorrage
८०- वमन कराना
८१- वातरक्त Gout
८२- विद्रधि Absces
८३- विष विकार Toxicity
८४- विसर्प (विस्फोट)
८५- ज्वर Fever
८६- तृषा Thrust
८७- विविध व्रण Wounds
८८- शोथ (सूजन) Odema
८९- श्लीपर (हाथी पाँव) Filaria
९०- सन्नीपात
९१- सेन्द्रिय विष वृद्धि
९२- स्नायु विकृति Nervous Debility
९३- स्नायुक (नारु) Ginea Worm
९४- हलीमक
९५- हिक्का Hicough
९६- हृदयरोग Heart Disease
९७- क्षुद्ररोग

९८- श्वास (दमा) Asthama
९९- संगृहणि Spraue
१००- सुजाक Goinorrhea
१०१- स्त्री रोग Female disease
१०२- स्तन रोग
१०३- हारीद्रक
१०४- हिस्टीरिया Hysteria
१०५- क्षय (राजयक्ष्मा) Tuberculosis

**नोट**—गौ माता के विषय में हमें कई जगह से महत्वपूर्ण सामग्री मिली है। जिसे सर्व-साधारण के प्रयोग हेतु क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं। आपके पास भी अगर इस विषय में कोई जानकारी उपलब्ध हो तो हमारे कार्यालय को प्रेषित करने की कृपा करें हम प्रेषक के नाम सहित उस विषय वस्तु को प्रकाशित करेंगे। अभी सम्पादक महोदय की बम्वई यात्रा के दौरान बम्बई के श्रीलक्ष्मीनारायण चाण्डक सुपुत्र श्रीरामनाथजी चाण्डक कालबादेवी ने गौ सेवा के चमत्कारों की अनेक जानकारी प्रदान कीं साथ ही गौ-धन शब्दको सार्थक बनाने वाली अनेक बातें भी बताई उनकी चर्चा आगामी अङ्क में प्रकाशित होगी।

प्रत्राचार का पता—**आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा**
१२२, गोविन्द घेरा, वृन्दावन-२८११२१ (उ०प्र०)
नि० फोन : (०५६५) ४४३२२५

卐

---

# त्रुटिमार्जन

'अनन्त-सन्देश' वर्ष २५ अङ्क ५ के पृष्ठ २९ पर यतिराजसप्तति का श्लोक संख्या ६७ में चौथा चरण त्रुटिपूर्ण छप गया है—उसे इस प्रकार पढ़ें—

**श्लक्ष्णालोकनदौर्ललित्यललितोन्मेषा मनीषा मम ॥६७॥**

श्रीभगवत्कटाक्षो ममोपरि जन्मकाल एव निपतितः अत्र हेतुस्तस्य श्लक्ष्णालोकनस्य दयार्द्रालोकनस्य दौर्ललित्यं स्वैरव्यापार एव मयि तथा योग्यता तु नास्ति श्रीभगवत्कटाक्षविषयीकारोत्तरं मम मनीषाऽद्वेषाभिमुख्यसात्विकसंभाषणादिललितोन्मेषवती जाता।

इसका अर्थ—श्रीभगवान की कृपादृष्टि जन्म लेते समय मेरे ऊपर पड़ी। इसका कारण मेरा प्रबल पुण्य नहीं, वह श्रीभगवत्कृपादृष्टि का स्वतन्त्र व्यापार है, वह कृपादृष्टि स्वच्छन्द है, मेरे ऊपर वह दृष्टि श्रीभगवत्कृपा से ही पड़ गयी। उसके बल से मैं (श्रीवेदान्तदेशिक) आत्मकल्याण के मार्ग में मेरी अभिलाषा अग्रेसर हुयी और मेरा सदाचार्य के साथ सम्बन्ध हो पाया।

सदाचार्य से सम्बन्ध जुटने में छः कारण हैं—१. सर्वप्रथम जीवों पर श्रीभगवान् कल्याण कामना करते हैं, २. इसके बाद उस कल्याण कामना के प्रभाव से जीव बिना समझे ही पुण्य कर्म करने लगता है, ३. उन पुण्यों को निमित्त कर श्रीमन्नारायण भगवान् उन जीवों पर विशेष रूप से कृपादृष्टि करते हैं, ४. उस कृपादृष्टि के प्रभाव से जीवों के मन से द्वेष आदि भाव मिट जाते हैं, ५. अनन्तर जीव श्रीभगवान् के अभिमुख होने लगता है, ६. तब वह सात्विकजनों के साथ संभाषण करता है, तब सत्सङ्ग के प्रभाव से वह प्राणी सदाचार्य के समीप पहुँच कर पञ्चसंस्कारादि सम्बन्ध से युक्त होता है।

卐

# श्रीवेंकटेश दिव्यदेश बम्बई के व्रतोत्सव

卐卐

**श्रीअध्ययनोत्सव**—सम्वत् २०५३ मार्गशीर्ष मास अमावास्या मंगलवार दि० १० दिस० से श्रीअध्ययनोत्सव प्रारम्भ हुआ। अध्ययनोत्सव दस दिन तक चला। समम्त आल्वार आचार्यों सहित श्रीवेङ्कटेश भगवान् विराजे और आराधन हुआ।

**श्रीधनुर्मासोत्सव**—धनुष राशि पर सूर्य दिनांक १५-१२-९६ रविवारको आये, आजसे ही धनुष संक्रान्ति प्रारम्भ हुई और श्रीगोदादेवीजीका श्रीव्रत धनुर्मासोत्सव दि० १६ से प्रारम्भ हूआ। आज अध्ययनोत्सव का ७ वां दिन था। अध्ययनोत्सव की पूर्ति दि० १९-१२-९६ गुरुवार को हुई।

**श्रीवैकुण्ठ एकादशी**—दि० २०-१२-९६ शुक्रवार को एकादशी व्रत, श्रीवैकुण्ठ एकादशी को वैकुण्ठ द्वार प्रातः खुलता है, मध्याह्न में अभिषेक, नित्य रात्रि को सवारी दिव्य-प्रबन्ध-पाठ गोष्ठी विनियोग होता है। आज से ही श्रीवैकुण्ठोत्सव प्रारम्भ हुआ। यह श्रीशठकोप स्वामीजी के वैकुण्ठ गमन के उपलक्ष्य में दस दिन तक मनाया जाता है। इसकी पूर्ति दि० २९ दिस० '९६ रविवार को हुई। श्रीशठकोप स्वामीजी को भगवच्चरणारविन्द की प्राप्ति महोत्सव मनाया गया। दि० ३१-१२-९६ मङ्गलवार से तिरुप्पल्लाण्डु पाठ प्रारम्भ हुआ। दि० ७-१-९७ मङ्गलवार को श्रीगोदाम्माजी का धनुर्मास व्रत स्नान प्रथम दि० १२-१-९७ को धनुर्मास व्रत स्नान छः। दि० १३-१-९७ को २९-३० वाँ सोमवार को धनुर्मास पूजा की पूर्ति, श्रीगोदाम्माजी का विवाहोसव बड़ी धूम-धाम से सम्पन्न होगा।

**मकर संक्रान्ति**—दि० १४-१-९७ मङ्गलवार को मकर राशिगत सूर्य का संक्रमण होगा, आज से उत्तरायण पुण्यकाल प्रारम्भ होगा। प्रयाग में कल्पवास प्रारम्भ होगा।

**मृगयोत्सव**—दि० १५-१-९७ बुधवार आज कनु मृगयोत्सव होगा। भगवान् मृगया उत्सव निमित्त सायंकाल शिकार निमित्त सवारी से मन्दिर में हीं पधारेंगे।

**पूर्णिमा**—दि० २३-१-९७ गुरुवार पूर्णिमा पुण्यकाल।

**वन भोजनोत्सव**—दि० २५-१-९७ शनिवार को वनभोजनोत्सव (खार रोड) पर सवारी जायेगी। दि० २६-१-९७ रविवार को वनभोजनोत्सव निमित्त सवारी गोरेगाँव पधारेगी।

**एकादशी व्रत**—पौष कृष्ण एकादशी व्रत दि० ५-१-९७ रविवार को। पौष शुक्ल एकादशी दिनांक १९-१-९७ रविवार को। माघकृष्ण एकादशी व्रत दि० ४-२-९७ मङ्गलवार को। माघशुक्ल श्रीबसन्त पंचमी दि० १२-२-९७ बुधवार को। माघशुक्ल एकादशी व्रत दि० १८-२-९७ मङ्गलवार को इसी दिन श्रीआचार्य महोत्सव दस दिन का प्रारम्भ हो जाता है। फाल्गुन कृष्ण ५ चित्रा नक्षत्र दि० २७-२-९७ गुरुवार को यह समाप्त होता है। मन्दिर का निर्माण भगवान् की प्रतिष्ठा कराकर अपनी महती सम्पत्ति को भगवदर्पण कर श्रीजगद्गुरु गादी स्वामी श्रीअनन्ताचार्य जी महाराज का दस दिन का उत्सव होता है, चित्रा नक्षत्र में समाप्त होता है। बड़े वैभव के साथ शहर में सवारी निकलती है।

卐

# श्रीगीता जयन्ती

भगवान श्रीकृष्ण की दिव्यवाणी श्रीगीताजी का जयन्ती महोत्सव सम्पूर्ण राष्ट्र में बड़ी ही श्रद्धा से दिनाँक २०।१२।९६ श्री मोक्षदा वैकुण्ठ एकादशी शुक्रवार के दिन मनाया गया। इस अवसर पर श्रीकृष्ण विग्रह के साथ श्रीगीताजो का पूजन किया गया विद्वानों के अपने भाव कुसमों को सर्मापित करके अपने को गौरवान्वित किया।

## गीता पढ़ें और पढ़ायें

भगवान श्रीकृष्ण की अनेक दिव्य लीलाओं में निश्चित ही यह अपूर्व अवसर आया जिस समय लोककल्याण की भावना से अर्जुन को माध्यम बनाकर श्रीकृष्ण ने इस दिव्य ज्ञान को प्रकाशित किया। इस अपूर्व ज्ञान के प्रकाश में आज हम अपनी अनेक समस्याओं का समाधान ढूँढ लेते हैं। ऐसे एकमात्र विश्वमान्य इस अद्भुत ग्रन्थ को पढ़ना–पढ़ाना और संग्रह में रखना प्रत्येक मानव का कर्तव्य है। इसके प्रतिदिन पाठ से मन को एक नई शक्ति प्राप्त होती है।

अत: आप भी इस ग्रंथ की एक प्रति अपने घर में अवश्य रखिये और अपने परिचितों को भेंट में प्रदान करिये ये आपकी अपूर्वं भेंट होगी। गीताजी की पुस्तक प्राप्त करने के लिये आप हमें पत्र लिखें।

**आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा**

पत्राचार का पता—**श्रीरङ्गनाथ प्रेस, रंगजी का कटरा**
वृन्दावन–२८११२१ (मथुरा) उ० प्र०

☎ : (०५६५) ४४२१३१

## ॥ श्रीवेंकटेश देव स्थान ॥

श्रीसमान नहीं जगत में, कोई देवी देव।
वेदहु निशिदिन करत हैं, वेंकटेश का सेव॥
कबहूँक कृपा पाइहौं, मायापति भगवान।
टेक को अपनी छाँड़िकर, करहु प्रभु का ध्यान॥
शरण में आया जीव जो, पायो हरि का धाम।
देव नहीं देवेश ये, आये मुम्बई ग्राम॥
वस में इनके हैं सभी, विश्व प्राणी सब आज।
स्थान ये मुम्बई में रचे विश्ववंध गुरु राज॥
नमत सिद्धेश्वर रात दिन, केवल भगतिकाज।
एक बार आ देख लें, वेङ्कटेश का राज॥

कवि–**सिद्धेश्वर पाठक**
ग्रा० बुधुआ, पलामू (बिहार)

## —: चेतावनी :—

अफसोस मूढ़ मन तू, मुद्दत से सो रहा है।
सोचा न यह कि घर में अन्धेर हो रहा है॥
चौरासीलाख मंजिल, तय करके मुश्किलों से।
जिस घरको तूने ढूँढ़ा, उस घरको खो रहा है॥
घट में है ज्ञान गंगा उसमें न मारा गोता।
तृष्णा के गन्दे जल में, इस तन को धो रहा है॥
अनमोल स्वास तेरी, पापों में जा रही है।
रत्नों को छोड़ कङ्कड़ और काँच ढो रहा है॥
संसार सिन्धु से तू क्या खाक पार होगा।
विषयों के 'बिन्दु' में जब किश्ती डुबो रहा है॥

**—गोस्वामी बिन्दुजी महाराज**

# श्री गोदाम्बाजी की तीस गाथाओं का जीवों को स्वापदेश

卐卐

१—श्रीगोदादेवी का सम्पूर्ण जीवों को उपदेश या आदेश है कि श्रीकृष्ण को ही हमें अपना सहायक, साधन और साध्य मानना चाहिए। श्रीकृष्ण सबके हैं। श्रीकृष्ण प्रेम रसामृत-सिन्धु हैं, वे प्रेम से प्राप्त हो सकते हैं। हमें तो उनके अभिमुख हो सब प्रकार से उनका आश्रय लेना चाहिए, आश्रितों को वे अपनी कृपा के अनुगुण ही फल देते हैं। हम श्रीकृष्णानुभव-रूपतीर्थ में अवगाहन करें। आत्मा (जीव) परमात्मा श्रीकृष्ण का अनन्यार्ह भोग्य है। यह आत्मा उन्हीं के लिए है। इनके शोभावर्धक-भूषण ज्ञान-वैराग्य और भक्ति हैं। इनको धारणकर सौभाग्यवती होकर श्रीकृष्ण की सेवामें जाना चाहिए। मङ्गलाशासन परायण आचार्य ही श्रीनन्द बाबा हैं। श्रीयशोदा माता ही भगवान् को गर्भ में धारण करने वाला मन्त्र है। उस मन्त्र का जप करने से ही श्रीकृष्ण की प्राप्ति होती है। मन्त्र के अर्थ का ज्ञान ही श्रीयशोदा के नेत्र हैं। मन्त्र के अर्थ के ज्ञान में ही श्रीकृष्ण का पूर्ण वैभव और उनके रूप, गुण, लीला आदि का संक्षेप में निरूपण हो जाता है।

२—प्राकृत विषयों का आसक्ति पूर्वक उपभोग करना—घृत-दुग्ध का भोजन है। ज्ञान के साधनों का अनुष्ठान, नेत्रों में काजल लगाना है, भक्ति के साधनों का साधन, केशों में पुष्प धारण करना है। श्रीकृष्ण की कथा धर्मदान है। भक्तों के चरित्र की कथा भिक्षा है। श्रीकृष्ण के स्वरूप, रूप, गुण और विभूतियों का ज्ञान धर्म है। केवल चेतन-आत्मा का ज्ञान भिक्षा है। इन दोनों प्रकार के ज्ञानों का उपदेश व्रत करने वालों के लिए अपेक्षित है।

३—ज्ञान का अभाव ही (देश में) दुर्भिक्ष है। आकारत्रय—अनन्यार्हशेषत्व, अनन्यशरणत्व, अनन्यभोग्यत्व, का ज्ञान ही तीन वार की वर्षा है, ज्ञानी पुरुष धान हैं। उनके अनुगामी लोग मछलियाँ हैं। श्रीकृष्ण के गुणों का आस्वादन कमलों का मधुपान है। रसिकजन भ्रमर हैं। अर्थपंचक के ज्ञान से परिपुष्ट आचार्य गौ हैं। उनका ज्ञान ही दुग्ध है। शिष्यगण कलश हैं। यह ज्ञान चेतन की नित्य सम्पत्ति है।

४—परमज्ञान के सागर परमात्मा श्रीकृष्ण ही समुद्र हैं। उस श्रीकृष्ण की कृपा से प्राप्त ज्ञान के द्वारा जीवन निर्वाह करने वाले आचार्य ही मेघ हैं। श्रीकृष्ण के गुण समुद्र में गहरा गोता लगाना ही समुद्र के भीतर प्रवेश करना है। आचार्यपद पर विराजमान होना ही मेघ का ऊपर चढ़ना है। आचार्य में श्रीकृष्ण के समान गुणों का साधर्म्य होना ही शरीर में श्यामता है। ज्ञान की वर्षा ही जलवर्षा है। प्रवचन ही मेघ गर्जना है। भगवद्विषय का स्पष्टीकरण ही बिजली की चमक है। श्रीकृष्ण का अनुभव और सेवा मार्गशीर्ष स्नान है।

५—हम श्रीकृष्ण को प्रणाम करेंगी। हाथ जोड़ेंगी। मुख से हम उनके नामों का गान करेंगी। नाम गान से हमारी वाणी सफल हो जायेगी। मन से चिन्तन करेंगी। मन सब इन्द्रियों का मूल प्रेरक है। जब मन श्रीकृष्ण की ओर झुका, तब वाणी और शरीर उनमें लीन हो ही जायेंगे, ऐसा होने पर हमारे सारे पाप उसी प्रकार जल जायेंगे जैसे आग में पड़कर रुई जलकर राख हो

जाती है। पूर्वाघ और उत्तराघ सभी नष्ट हो जायेंगे। पाप से डरने की बात ही नहीं रह जायगी, अनादि काल से जान-बूझकर किये हुए पापों को पूर्वाघ कहते हैं, और श्रीकृष्ण के स्वरूप ज्ञान के बाद प्रकृति की वासना के वश होकर प्रमाद से किये हुए पाप उत्तराघ कहलाते हैं।

६—अज्ञान-रूपी निशा के अन्धकार का नाश करने वाला ज्ञानरूपी सूर्य का उदय होना ही प्रातः काल है। श्रीकृष्ण से मिलने के लिए यही काल उपयुक्त होता है। ज्ञानी वैष्णवजन ही पक्षी हैं। इनके प्रवचनों के द्वारा यह प्रभात होता है। अष्टाक्षर श्रीमन्त्र विष्णु मन्दिर है। उसमें प्रणव, ओंकार शङ्ख हैं। प्रणव का अर्थ शंखध्वनि है, जिसके श्रवण से चेतन का अज्ञान नष्ट हो जाता है। ज्ञान सूर्य के उदय होने पर ही प्रभात होता है।

७—जो अपने वचन और आचरणों के द्वारा आश्रितों के अहङ्कार को दूर करते हैं, ऐसे श्री-वैष्णवजन ही भरद्वाज पक्षी हैं। मूलमन्त्र, द्वयमन्त्र, चरममन्त्र इन मन्त्रों का प्रवचन ही दधिमन्थन ध्वनि है। इन मन्त्रों का अर्थ श्रवण करने से अज्ञान-रूपी अन्धकार की निवृत्ति होती है। मन्त्रार्थ के प्रवचनकर्ता ज्ञानी ही दधिमन्थन करने वाली गोपियाँ हैं। श्रीकृष्ण के गुणानुभव से जो आत्मा में प्रकाश होता है, उसे तेज कहते हैं। ऐसे तेजस्वी महानुभावों का सहवास सदा वाञ्छनीय है।

८—अज्ञान ही भैंस है। ओस की भीगी घासें हैं अज्ञानीजन, अज्ञानियों को अज्ञान खाता है। श्रीकृष्णरूपी सूर्य की सन्निधि में अज्ञान नष्ट हो जाता है। जो जीव श्रीभगवान् के निकट रहते हैं, उन्हें अज्ञान नहीं सताता। भगवत्सम्बन्धी अभिमान कौतूहल कहलाता है। मैं श्रीकृष्ण का हूँ, ऐसा जिसे अभिमान है, वह श्रीकृष्ण को बहुत प्रिय है। जिसका जीवन श्रीकृष्ण के लिए ही है, जो अपनी आत्मा और आत्मीयों को श्रीकृष्ण का भोग्य मानता है, वही चेतन कठपुतली के समान श्रीकृष्ण के विनोद की वस्तु है। काम, क्रोध आदि मल्ल हैं। प्राकृत अहङ्कार केशीदैत्य घोड़ा है। इनको नष्ट करके आश्रित जनों की रक्षा करना श्रीकृष्ण का ही काम है। दूसरा कोई ऐसा नहीं कर सकता है।

९—नवधा भक्ति शुद्ध मणियों का गृह है। श्रीपति श्रीकृष्ण मातुल हैं। अनन्यार्ह वैष्णव पुत्रीरूप हैं। उनका पोषण स्वयं श्रीजी और श्रीकृष्ण के द्वारा होता है। ज्ञानरूपा अनन्योपाय-रूपा श्रीजी ही मातुलानी हैं। अहङ्कार और ममता श्रीकृष्णानुभव के विरोधी द्वार के किवाड़ों के यन्त्र ताले हैं।

१०—सिद्धसाधन-रूप श्रीकृष्ण का सब प्रकार से आश्रय ग्रहण कर लेना ही अनुष्ठान है। श्रीकृष्ण की प्रसन्नता, उनका मुखोल्लास तथा उनके स्वरूप, रूप, गुण, विभूति, लीला आदि के अनु-भव से प्राप्त सुख ही यहाँ स्वर्गशब्द का द्योतक है। श्रीकृष्ण का अनुभव ही स्वर्ग है। अहङ्कार चेतन को श्रीकृष्ण की ओर जाने से रोकता है—कथा, कीर्तन, सत्संग आदि में जाने से रोकता है। अहङ्कारी जीव मान, प्रशंसा आदि प्रतिष्ठा के चक्कर में पड़कर नष्ट हो जाता है। श्रीमती गोदा किवाड़ खोलने की जो प्रार्थना करती है, उसका अर्थ है कि चेतनों के अहङ्कार को कृपा करके दूर करो। सन्तों की रक्षा के लिए सर्वत्र ही जो श्रीकृष्ण की व्यापकता है, वही सौरभ (सुगन्ध) है। व्यापक होने से श्रीकृष्ण आवश्यकता पड़ने पर तत्काल सन्त-रक्षण-स्थल में प्रकट हो जाते हैं। नृसिंह अवतार भी ऐसी ही स्थिति में हुआ था। श्रीकृष्ण की भक्ति का अधिकारी चेतन कुम्भकर्ण है। उसकी विषय भोग विस्मृति निद्रा है। जो व्यापार श्रीकृष्ण की सेवा से सम्बन्ध नहीं रखता, उसके करने हेतु मनमें उत्साह न होना, शरीर से कोई चेष्टा न होना ही व्यामोह है।

११—गोप-रूप आचार्य की वाणी ही गायें हैं, शिष्य बछड़े हैं। शिष्यों को ज्ञानदान गोदोहन है। आचार्यों के शत्रु वे ही हैं, जो श्रीकृष्ण से भिन्न साधन और साध्य मानते हैं। इनके इस विपरीत ज्ञान का नाश करना ही शत्रुओं के वल का नाश करना है। अपनी समस्त चेष्टाओं—व्यापारों को श्रीकृष्ण की सेवा से भिन्न मानना—वैसी बुद्धि करना ही दोष में परिणत होता है। इन आचार्यों में वह दोष नहीं होता, वे तो भगवत्कैङ्कर्य-बुद्धि से ही समस्त व्यापार करते हैं। श्रीकृष्ण में ही जिनकी बुद्धि सुदृढ़, सुस्थिर है—जो श्रीकृष्ण को ही उपाय (साधन) और उपेय (साध्य) मानते हैं, उन्हीं को मैं गोपाल कहती हूँ। वे हैं आचार्य। ज्ञान को प्रकाश करना ही शत्रुओं के साथ युद्ध है। प्रेमलता अर्थात् पराभक्ति विशिष्ट चेतन। ऐसे चेतन को श्रीकृष्ण से दर्शन हो जाने पर उनके संश्लेष की इच्छा होती है। जैसे लता किसी समीपस्थ आश्रय से लिपटना चाहती है, ऐसा ही पराभक्ति का स्वरूप है। पराभक्ति में श्रीकृष्ण में लीन होने का सन्देह होता है। श्रीकृष्ण का दर्शन हो जाना पराभक्ति है। दर्शन का फल है, श्रीकृष्ण के संश्लेष की इच्छा। 'वल्मीकाहिनितम्बे' का अर्थ है परज्ञान अर्थात् श्रीकृष्ण का सङ्गम जिस चेतन को प्राप्त हो रहा है, उनके रूप, गुण, लीला आदि के रस का आस्वादन जो कर रहा है, इसमें काम का संवेग नहीं है, परस्पर विशुद्ध प्रेम है। परज्ञानवान चेतन स्वसुख का नहीं श्रीकृष्ण के संश्लेश से पूर्णरूप से उनके रूपगुण आदि का आस्वादन करते हैं। श्रीकृष्ण भी ज्ञानी भक्त को अधिक प्यार करते हैं, उसे अपनी आतमा ही मानते हैं—ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्। एक चेतन परमाभक्ति विशिष्ट होता है। परमाभक्ति का स्वरूप है—व्यामोह, बेचैनी, विह्व-लता। जैसे नायिका की शोभा शिर पर गुँथे फूलों से होती है वैसे ही चेतन अधिकारी श्रीकृष्ण का संश्लेष पाकर भी पुनर्विश्लेष के भय से व्याकुल होकर रोये और बेचैनी का अनुभव करे तभी उस भक्त चेतन की शोभा है, इसी व्यामोह को परमाभक्ति कहते हैं। श्रीकृष्ण नायक हैं और चेतन जीव नायिका=जो अनन्यभाव से श्रीकृष्ण के ही उपयोग में आने वाली वस्तु बन गये हैं, उन्ही अनन्यार्ह वैष्णव चेतन को यहाँ सखी कहा गया है।

१२—शिष्य बछड़ा है। अनेक बार की ब्याई हुई गौ को महिषी कहते हैं। इस प्रकार आचार्य ही महिषी हैं। आचार्य दो प्रकार के होते हैं। एक वाणी के द्वारा गुणानुभव कराने वाले, दूसरे केवल अपने प्रभावशाली आचरण के द्वारा अनुभव कराने वाले। गुणास्वाद ही दुग्ध है। श्रोताओं का हृदय ही घर है, जिसमें गुणास्वाद की कीच है, उस कीच में किसी का प्रवेश सम्भव नहीं है। वर्षा है—पुरातन शठकोप आदि सूरियों की सूक्तियों का रसास्वाद मूलमन्त्र में 'नमः' पद है, वह है स्तम्भ। उसका अर्थ है गुणानुभव से स्वभोक्तृत्व बुद्धि का त्याग। अर्थात् श्रीकृष्ण के मुखोल्लास के लिए उनकी सेवा की बुद्धि से गुणों का आस्वादन करना—अपने सुख के लिए नहीं, सदा श्रीकृष्ण के सुख को ही अपना सुख मानना। विना दोहन के अपने आप दूध का स्तनों से स्राव होना बिना बाणी प्रयोग के केवल आचरण द्वारा गुणानुभव करना है।

१३—श्रीमती गोदादेवी अपनी प्रत्येक गाथा के अन्त में 'छन्दोऽस्माकं निबोधत' के द्वारा यह कहती हैं कि मेरी गाथा के स्वापदेश का गूढ़ रहस्यार्थ समझो। कालक्षेपार्थ कथा कीर्तन का स्थान ही व्रतस्थल है, जहाँ अनन्यार्ह वैष्णव-जन ही गोप-कन्यायें हैं। वे ही श्रीहरि के गुणों का श्रवण करते हैं। 'श्रवण करना' ही सुशीतल जल का स्नान है। विशुद्ध ज्ञान का उदय होना ही शुक्रोदय है। अहंभाव-तर्कबुद्धि का अन्त होना ही गुरु का अस्त है। अनान्यार्हत्व आदि स्वच्छ, श्लाघ्य,

सारग्राही ज्ञान ही यहाँ नयन हैं। जिस चेतन को अनन्यार्हत्व, अनन्य-भोग्यत्व, अनन्य-शरणत्व इस अपने आकारत्रय का यथार्थ ज्ञान है, वह श्रीकृष्ण को अपनी आतमा के समान प्रिय है। 'उदाराः सर्व एवैते-ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्। श्रीमती जगज्जननी जानकी ने भूगर्भ में प्रवेश करके अनन्यार्हत्व, वाल्मीकि-आश्रम में लवकुश के लालन-पालन-शिक्षण आदि के द्वारा अनन्य भोग्यत्व तथा लङ्का में रावण के कारागार में दस मास निवास करके अनन्य शरणत्व का चेतनों को बोध कराके अपने आचार्यपद का निर्वाह किया है। वैष्णव सम्प्रदायमें श्रीदेवीको ही प्रधान आचार्य गुरु माना जाता है।

१४—योगलता सखी के विहार करने का बाग है मूलमन्त्र। इसमें नमः पद है बावड़ी। नमः पद के अर्थ का ज्ञान होते ही चेतन सर्वथा श्रीकृष्ण के अधीन हो जाते हैं। पारतन्त्र्य का ज्ञान विकसित होना ही कमलों का विकास है। स्वतन्त्र नहीं हूँ, यह भाव उदय होना ही कुमुदों का मुकुलित होना है।

१५—महाबलवान कुवलयापीड हाथी ही अहङ्कार है, जो जीव के स्वयं के अपने यत्न से तथा प्रायश्चित्त द्वारा निवृत्त नहीं होता। चाणूर, मुष्टिक, शल, तोशल, आदि मल्ल ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, आदि शत्रु हैं, काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि का शासन स्वयं श्रीकृष्ण भगवान् ही कर सकते हैं, अतः जीव को चाहिए कि उन्हीं के चरणों में प्रार्थना करे—उन्हीं का गुणगान करे। श्रीकृष्ण के चरणों में तन्मयता तथा उनके नाम गुण कीर्तन से ही शान्ति मिलती है।

१६—श्रीनन्दगोपाल आचार्य हैं। इन्द्र का निवास—रूप मन्दिर है मन्त्रार्थ ज्ञान। उसका रक्षक है मन्त्र। मन्त्र में जो नमःपद है, वह है द्वारपाल। अर्थात्, नमःपद के ज्ञान होने पर ही अहम्ता-ममता रूपी किवाड़ खुलते हैं। ताला है स्वातन्त्र्य। जब तक जीव अपने को स्वतन्त्र मानता है, तब तक उसका श्रीकृष्ण के समीप पहुँचना सम्भव नहीं। गोपकन्यायें हैं पूर्वोक्त ज्ञान सम्पन्न जीवात्मा (ज्ञानीजन) उपाय (साधन) और उपेय साध्य दोनोंही श्रीकृष्ण हैं, ऐसा जानना ही ज्ञान है।

१७—यह चेतन श्रीकृष्ण का अनन्यार्ह शेष (दास) है और अनन्यशरण है, इसके रक्षक एकमात्र श्रीकृष्ण भगवान् हीं हैं। यह जीव अनन्यभोग्य हैं। श्रीकृष्ण का एकमात्र भोग्य है—वे जैसे चाहें, वैसे इसको अपने उपयोग में लायें। यह तीन प्रकार का ज्ञानही वस्त्र, जल और अन्न है। शिष्य को इस ज्ञान का दान आचार्य करता है। इसी ज्ञान से शिष्य का धारण-पोषण होता है। शिष्य के स्वरूप की रक्षा होती है। ईश्वर श्रीकृष्ण को प्रकट करने वाला आचार्य ही ईश्वर का पिता माना गया है। यहाँ नन्दलाल ही आचार्य बताये गये हैं। मन्त्र है यशोदा। मन्त्र के गर्भ से ही ईश्वर का जन्म होता है। आचार्यों की परम्परा होती है। परमाचार्य की पद्धति सभी आचार्यों को मान्य होती है। यहाँ परमाचार्य हैं श्रीबलदेवजी। उन्होंने गोपीरूप शिष्यों को श्रीकृष्ण का पता बताया कि वे पास ही मिलेंगे। तुम राधा को जाकर जगा दो। ऐसा संकेत पाकर गोपियाँ वहीं पहुँची हैं।

१८—अहङ्कार ही यहाँ मदोन्मत्त महाबली हाथी है। उसका दमन करने वाला ज्ञान भुजबल है। ज्ञान से सम्पन्न आचार्य ही श्रीनन्द-गोप हैं। आचार्य की शक्ति ही, शिष्य को ज्ञान देकर उसके अहङ्कार की निवृत्ति करती है। श्रीकृष्ण-विषयक व्यामोह-विह्वलता को यहाँ सुगन्धित केश माना है। बन्द द्वार अज्ञान है। अज्ञानी के लिए श्रीकृष्ण के घर का द्वार बन्द रहता है। कुक्कुट (मुरगा) वैष्णवजन हैं। उनके बोलने से वाग्विलास से उपदेश से सत्वगुण प्रभात का उदय होता है। वाल्मीकि, व्यास, श्रीनाथमुनि, यामुनाचार्य आदि ही कोकिल हैं। उनकी वाणी से प्रभात होता है।

कर-ममल से द्वार खोलने का अर्थ है ज्ञान द्वारा अज्ञान को निवृत्त करना। ज्ञान में सौन्दर्य है। बिषयों में प्रीति न होना सौकुमार्य है। स्वभोक्तृत्व की निवृत्ति ज्ञान का सौगन्ध्य है। नित्य प्रेमात्मकता चूड़ियों का बजना है मूलमन्त्र, द्वयमन्त्र, चरममन्त्र का रहस्यार्थ—प्रकाश है।

१९—श्रीराधा के भवन में स्तम्भदीप जल रहा है, वह है ज्ञानरूपी दीपक। ज्ञान के प्रकाश में ही प्रिया-प्रियतम का दर्शन होता है। श्रीगोदादेवी के मत में ज्ञान और भक्ति एक ही बस्तु हैं। ज्ञान की परिपक्व अवस्था ही भक्ति है, उसे ही प्रेम कहते हैं। चार प्रकार का अभिमान ही श्रीराधा के पलंग के चार पाये हैं। इन अभिमानों को दबाकर इनके ऊपर राधा सोती है। हम अपनी क्रिया-कुशलता से—अपनी बुद्धि की चातुरी से प्रिया-प्रियतम के दास बने हुए हैं। इस दासत्व भाव का कर्तृत्वाभिमान एक पाया है। मैं दास हूँ. यह अभिमान तो उत्तम है। परन्तु दासत्व के हम कर्ता हैं, यह अभिमान हेय है—दूषित है। दूसरा पाया है—ज्ञातृत्व के सम्पादन में अपने को कर्ता मानना। तीसरा पाया है—अपने कर्तृत्व में अपनी चेष्टाओं में अपने को स्वतन्त्र कर्ता मानना। चौथा पाया है—अपने को भोक्ता मानना। अर्थात् अपने उद्योग से मैंने भोग्य पदार्थ संचित किये हैं और मैं उनका भोगने वाला हूँ। इस प्रकार के ये चार अभिमान—रूपी पलंग के चार पायों को दबाकर इनके ऊपर श्रीराधा सोती हैं। कुवलयापीड हाथी-रूपो अहङ्कार के ये चार अभिमान ही चार दाँत हैं उनको उखाड़ने की शक्ति श्रीकृष्ण में ही है। इस पलंग पर अर्थपंचक ज्ञान की मुलायम रुई की तोसक बिछी है। ये ज्ञान पंचक हैं—(१) अपने स्वरूप का ज्ञान, (२) पर-स्वरूप श्रीकृष्णके स्वरूप का ज्ञान, (३) उपेय श्रीकृष्ण के प्राप्त करने योग्य अर्थ का ज्ञान, (४) उपाय का ज्ञान, (५) विरोधी का ज्ञान। मुलायम रुई की तोसक अर्थपंचक ज्ञान है। इसीके ऊपर ही श्रीराधा-कृष्ण शयन करते हैं।

जिस श्रीकृष्ण विषयक प्रेम में बेचैनी हो, अश्रुकम्प आदि अष्ट सात्विक विकार प्रदीप्त हों, उसे व्यामोह कहते हैं। उसी से भक्त प्रेमी की शोभा होती है। यही व्यामोह केश हैं। केशों से शरीर की शोभा होती है। पुष्पों के गुच्छ-सदृश केशों का अर्थ है – व्यामोह के साथ ज्ञानस्वरूप आत्मा की प्रतीति होना। ज्ञानावस्था और प्रेमावस्था दोनों का मिश्रण ही गुच्छेदार पुष्प सदृष केश हैं। सबसे अधिक व्यामोह श्रीराधा में है। उसे ही महाभाव नाम से आचार्यों ने वर्णन किया है। भोगोपकरण-रूपा भक्ति ही श्रीराधा के उरोज हैं, जिनका आश्रय करके श्रीकृष्ण व्यामोहित हो जाते हैं। विशृङ्खल असंकुचित आत्मा का जो यथार्थ ज्ञान है. वही विशाल नयन हैं। उनमें शुद्ध सत्व ही अञ्जन है, जिसके सम्बन्ध से और भी अधिक ज्ञान का सौन्दर्य बढ़ जाता है।

२०—जिसका संकोच रहित ज्ञान है, ऐसे सूरिगणों को यहाँ अमर कहा गया हैं। प्रकृति के संग से ज्ञान संकोच होने के भय को कम्प (दुःख) कहा गया है। परिपुष्ट प्रेम ही श्रीराधा का उरोज मण्डल है। अनुराग ही अधरों की लाली है। श्रीकृष्ण के विरह में जो दीनता है, वही पतली कमर है। अथवा, ज्ञानावस्था-विशेष के आश्रम में जो आत्मा है,उसकी अणुता-सूक्ष्मता ही पतली कमर है। जगद्विषयक अहङ्कार और ममकार (ममता) की निवृत्ति करने वाला साधन ही व्यंजन है। स्वस्वरूप और परस्वरूप का यथार्थ ज्ञान ही दर्पण है।

२१—ज्ञान ही दुग्ध है। उसको धारण करने की जिनमें योग्यता है, वे ही शिष्य यहाँ गो दोहन के पात्र हैं। श्रीकृष्ण के गुणानुभाव से पुष्ट हुए जो ज्ञानोपदेशक हैं, वे ही गायें हैं। ऐसी गायों के पालन करने वाले जो आचार्य हैं, वे ही नन्द जी हैं, जो श्रीकृष्ण के जन्मदाता पिता हैं। भक्त के

हृदय में आचार्य के द्वारा ही श्रीकृष्ण का जन्म होता है। मैं स्वतन्त्र कर्ता हूँ, स्वतन्त्र भोक्ता हूँ—इत्यादि अभिमान, बान्धवों में स्नेह तथा श्रीकृष्ण से भिन्न को उपाय (साधन) और उपेय (फल) मानना यही बल है। उन सबके क्षीण हो जाने पर जब श्रीकृष्ण भगवान्‌को ही 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव' मानकर, दीन होकर उनका आश्रय ग्रहण करने का अधिकारी होता है, तभी शरणागत होता है।

२२—श्रीगोदा का कथन सखियों से है—थोड़े-थोड़े कटाक्षपात करने का फल है ज्ञान। मैं क्रम से उसे बता रही हूँ। मैंने श्रीकृष्ण से यह प्रार्थना की है कि आप मुझे अपने कटाक्ष द्वारा यथा-प्रार्थित ज्ञान प्रदान करें—हमारे देहात्मभाव का त्याग करायें। हम देह को ही आत्मा मानती हैं। हमारे इस अज्ञान को दूर करके, आत्मा देह से भिन्न है, ऐसा ज्ञान कराने की कृपा करें। हम आपकी दासी हैं। यह दास्य भावना हमारे मनमें जाग्रत कर दें। हमें यह भी ज्ञान दें कि हम आपकी अनन्यार्ह सेविका हैं, अन्य किसी की नहीं। मैं ज्ञाता हूँ—समझदार हूँ. अभिमान के वशीभूत होकर चेतन अपने को स्वतन्त्र मानता है। कृपया इस स्वातन्त्र्य भावना से हमें मुक्त कर दें। हम अपने रक्षक स्वयं हैं, इस अभिमान की भी निवृत्ति करें। आपको ही हम उपाय समझें, ऐसा ज्ञान हमें देने की कृपा करें। हम अपनी सभी चेष्टाओं में जो अपना स्वतन्त्र कर्तृत्व मानती हैं, उसे निवृत्त करें। हम सर्वदा सर्वथा आपके अधीन-परतन्त्र हैं, यही हमारा स्वरूप है, यह ज्ञान हमको दो। सौन्दर्य, माधुर्य आदि सकल गुणविशिष्ट श्रीपति राधाकान्त-रूप से जो आप नित्य विराजमान हैं, उस अपने स्वरूप का हमको अनुभव कराइये। अनुभव के बाद प्रीति दीजिये, फिर अपनी सेवा प्रदान कीजिये। सेवा भी हम अति प्रेम से करें। ऐसी कृपा कीजिये। सेवा में कोई स्वार्थ न देखें, उसमें स्वभोक्तृत्व बुद्धि की आप निवृत्ति कर दें। इसके बाद आप हमको दोनों पूर्ण विकसित नेत्रों से देखिये। असंकुचित दृष्टि रो अपने कटाक्ष द्वारा परमाभक्ति प्रदान करें जिससे विश्लेष का–वियोग का–दुःख नष्ट हो जाय। यहाँ शाप का अर्थ वियोग का कष्ट है। प्रेम की तीन अवस्थायें मानी जाती हैं—परभक्ति, परज्ञान, परमाभक्ति। साक्षात्कार को परभक्ति, सेवा आदि के द्वारा संगम को परज्ञान, संगम हो जाने पर भी पुनः विश्लेष होने का भय परमाभक्ति कही जाती है।

२३—अभिन्न निमित्तोपादान-रूप चिदचिद्विशिष्ट अपने स्वरूप से सृष्टि करना अङ्ग हिलाना है। श्रीदेवी के साथ एक होकर स्थित होना है। चारों तरफ करवट लेना अङ्ग को तथा अङ्ग से गन्ध का प्रवाहित होना व्यापकता है। जगत् का नियमन करना ही सिंहासन पर बैठना है। बल-ऐश्वर्य से विशिष्ट होना ही सिंह नाम से कहा गया है। अपने स्वरूप का चेतनों को अनुभव कराना प्रबोध है—जागना है।

२४—श्रीगोदा ने कहा कि हे श्रीकृष्ण! आज हमें आपके अभिमुख होने का सौभाग्य बड़ी कठिनाई से प्राप्त हुआ है। आपके पास आई तो आप श्रीराधा के साथ भीतर सो रहे थे। आपके वियोग में हमारी नींद भाग गई है। आज हम घर से बाहर निकली हैं। सभी हमारे अनुकूल और अभिमुख हैं। आज रात में वृद्धाओं के सो जाने पर हम प्रेम से प्रेरित हो आपके पास आई हैं। अब आप हमारे ऊपर कृपा करो। उसके बिना कार्य सिद्ध नहीं होता। कृपा करना आपका स्वरूप है। आपका मङ्गलाशासन करना हमारा स्वरूप है। हम स्वकृत मङ्गलाशासन को साधन नहीं मानती हैं।

२५—श्रीगोदा कहती हैं—हे श्यामसुन्दर! श्रीजी के सम्बन्ध से आपकी महिमा है। यह बात शत्रु भी कहते हैं। हम आपके उस शौर्य का भी गान करेंगी, जिससे आप आश्रित भक्तों की

रक्षा करते हैं। जब आनन्द से आपका नाम कीर्तन करेंगी, और आपके वियोग कष्ट से मुक्ति भी प्राप्त करेंगी। आपको तो वियोग के दुःख का अनुभव ही नहीं है। आप कभी किसी से वियुक्त होते ही नहीं। कैवल्यमुक्त जीवों की तरह केवल दुःख से मुक्त होकर निजानन्द से ही तृप्त होना हम नहीं चाहतीं। हम चाहती हैं कि हमारे हृदय में आप दोनों राधा-कृष्ण-दम्पती के प्रेम का प्रवाह सदा प्रवाहित होता रहे।

२६—श्रीगोदादेवी ने सखियों से पूछा कि तुम लोगों ने मेरी गाथा के अर्थ को समझा? सखियों ने कहा—तू अपनी सरस मधुरवाणी से सैकड़ों श्रुतियों के अर्थ को व्यक्त करती हैं अतः तू ही बता दे। श्रीगोदा बोली—अच्छा सुनो—हमने श्रीकृष्ण से जो शंख माँगा है, वह शंख–ओंकार है। उसका अर्थ ही ध्वनि है। उससे चेतन को यह ज्ञान हो जाता है कि हम श्रीकृष्ण के अनन्यार्ह शेष हैं। जैसे कुण्ड के पास रखा हव्य पदार्थ केवल अग्नि में प्रक्षेप स्वाहा करने के लिए होता है। उसे शेष कहते हैं। दास शब्द का भी यही अर्थ है। जिसने अपनी आत्मा को और आत्मीयों को श्रीकृष्ण के लिए अर्पण कर दिया है, वही श्रीकृष्ण का शेष दास होता है। यह ज्ञान ही शंख की ध्वनि है। इस ज्ञान से सबको आनन्द प्राप्त होता है। शेष शब्द का यह भी अर्थ है कि हम श्रीकृष्ण के यथेष्ट विनि-योग की वस्तु बन जायें। जैसे हमको रखना चाहें, वैसे ही रहना हम पसन्द करें। हम श्रीकृष्ण का उत्कर्ष बढ़ायें—उन्हीं का मङ्गलाशासन करें—अपने लिए कुछ भी न चाहें। जैसे घृत, अग्नि में पड़ते ही उसे प्रचण्ड कर स्वयं स्वाहा हो जाता है और अग्नि का रूप बनाता है। अपनी कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं रखता, अग्नि का अंश बन जाता है। यही ओंकार-जन्य ज्ञान हमने शंख नाम से श्रीकृष्ण से माँगा है। हमने एक ढोल माँगा, उसका अर्थ समझ लो—ढोल दो तरह से बजाया जाता है। वह हमें दो बातें बताता है—एक तो यह कि हम अपने को स्वतन्त्र न मानें, दूसरी यह कि श्रीकृष्ण की सेवा करते हुए अपने को स्वतन्त्र भोक्ता न मानें। क्योंकि श्रीकृष्ण की सहायता के बिना कोई भी जीव न कर्ता हो सकता है, न भोक्ता। जो अपने को स्वतन्त्र कर्ता या भोक्ता मानते हैं वे असुर हैं स्वतन्त्र कर्तृत्व और भोक्तृत्व का बोध कराने वाला ज्ञान हमको 'नमः' पद से मिलता है। 'नमः' पद का अर्थ है—मैं मेरा, मेरा नहीं। अर्थात् अहंतास्पद चेतन और ममतास्पद उसकी अपनी वस्तुयें श्रीकृष्ण की हैं, उसकी नहीं। यही ज्ञान बताने वाला 'नमः' पद ही ढोल है। उसी ज्ञान को हम श्रीकृष्ण से माँग रही हैं। सदा श्रीकृष्ण का मङ्गल चाहना ही स्वार्थ है—अपने लिए जिनके मनमें कोई आकांक्षा नहीं, ऐसे सत्पुरुषों का संग भी हम श्रीकृष्ण से माँगती हैं। बिना उनकी कृपा के सन्तों का मिलना असम्भव है, 'बिन हरि कृपा मिलै नहिं सन्ता।' मैं श्रीकृष्ण के दासों का दास हूँ। यह ज्ञान ही दीपक है। इससे अखिलात्मा श्रीकृष्ण के हम दास हैं, अनन्य शेष है—यह ज्ञान ही हमारे दासत्व को प्रकाशित करता है। इसे हम श्रीकृष्ण से दीपक के नाम से माँग रही हैं। श्रीकृष्ण की सेवा–कैङ्कर्य ही ध्वजा है। इससे पता चलता है कि यह श्रीकृष्ण का दास है—कैङ्कर्य से दासत्व का परिचय होता है। कोरी बातों से नहीं, 'बातन प्रीति न होय सखी री।' मैंने श्रीकृष्ण से जो पटमण्डप माँगा है, उसका प्रयोजन यह है कि हम उनका कैङ्कर्य छिपाकर करें। इसका किसी को पता न चले। नहीं तो लोग हमारी प्रशंसा करेंगे। प्रशंसा हमारी भोग्य बन जायगी।

हम चाहती हैं कि कैङ्कर्य में हमारी भोग्य बुद्धि न होने पावे। परन्तु ऐसा ज्ञान श्रीकृष्ण कृपा जब करते हैं तभी होता है। अन्यथा, लोग ढोल पीट-पीटकर अपनी भक्ति का प्रदर्शन करते हैं कि सब हमारी प्रशंसा करें। वे प्रशंसा के लोभियों का भक्ति में मन नहीं लगता है। वे श्रीकृष्ण के

विमुख हैं। हम श्रीकृष्ण से यही माँगती हैं कि आपके कैङ्कर्य में हमको भोक्तृत्व बुद्धि न हो, हम छिपकर भक्ति करें।

२७—मैंने श्रीकृष्ण से वलय और शंख माँगे हैं। इनके माँगने का अभिप्राय है कि हमको शंख चक्रकी तप्त मुद्रा से अङ्कित करदें, जिससे हम आपका साम्य प्राप्त करलें और पवित्रहो जाँय और आपके पाणिग्रहण करने योग्य बन जाँय। ये ही हमारे बाहुमूल पर धारण करने योग्य आभूषण हैं। बलय तो चूड़ी या कंकण है और शंख है बाजूवन्द, ये दोनों हाथों के आभूषण हैं। कर्णिका है अष्टाक्षर मन्त्र। कान की बाली से ज्ञान प्राप्त होता है। ज्ञान ही कान का परमभूषण है। कर्णपुष्प के नाम से भक्ति-रूप आभूषण माँगा है। यह है द्वयमन्त्रार्थ जन्य ज्ञान। नूपुर ही वैराग्य है जो 'सर्व धर्मान्' इस चरममन्त्र का अर्थ जन्य ज्ञान है। इस प्रकार मैंने ज्ञान, भक्ति, वैराग्य रूप आभूषण माँगे हैं। वस्त्र है स्वशेषत्व रूप ज्ञान। अर्थात् हम आपकी दासी हैं। जिस प्रकार चाहें रखें। यह ज्ञान ही वस्त्र है। क्षीरान्न–खीर है सेवा (कैंकर्य)। उसकी मैंने याचना की है। खीर में घृत है सेवा करते समय अपने को सर्वथा परतन्त्र मानना-दीनता और अधीनता पूर्वक सेवा में प्रवृत्त होना।

२८—ज्ञानहीन पशु तुल्य अज्ञानीजन ही यहाँ धेनु हैं। उनसे संसर्ग रखने वाले देहासक्त जीव गोप हैं। सत्कर्म, ज्ञान और भक्ति से वर्जित देश ही वन है। इन सबका परित्याग करना उचित है। अथवा इनका संसर्ग रहते हुए भी 'हम श्रीकृष्ण के दास हैं' ऐसी दृढ़ भावना रखनी चाहिये।

२९—हे श्रीकृष्ण हम आपकी सहधर्मचारिणी बनना चाहती हैं। आप हमारे स्वामी, हम तुम्हारी दासी हैं। हम आपकी शरीर हों और आप हमारे शरीरी आत्मा हों। हमारा सब प्रकार का सम्बन्ध आपसे हो। जैसे पाण्डवों के आप आश्रय, बल, रक्षक और स्वामी बने थे वैसे ही—

कृष्णाश्रयाः कृष्णबलाः कृष्णनाथाश्च पाण्डवाः।

पिता च रक्षकः शेषी भर्ताज्ञेयो रमापतिः। स्वाम्याधारोऽखिलात्मा च भोक्ता जीवात्मनामिह ॥

जीवों के साथ आपका नवविध सम्बन्ध-पिता, रक्षक, शेषी, भर्ता, ज्ञेय, स्वामी, आधार, भोक्ता-माना गया है। हम श्रीलक्ष्मीजी की तरह सदा पास रहकर आपकी सेवा करें, न कि भरत जी की तरह हमारा अधिक वियोग हो, हमारी सेवा केवल आपके मुखोल्लास के लिए हो। आप केवल अपने ही स्वार्थ के लिए हमको स्वीकार करें। आपकी ही जिसमें प्रसन्नता हो, ऐसा कैंकर्य आप हम से करायें। कैंकर्य द्वारा आप ही सुखी हों—हम उस सुख का भोग नहीं चाहती हैं। हम सेवा करने वाली हैं, यह अहङ्कार भी हमको न हो, क्योंकि अहङ्कार गर्भित कैङ्कर्य पुरुषार्थ नहीं होता है। 'हम' और 'हमारा' तथा 'तुम्हारा' और इनका ये दोनों वृत्तियाँ दूषित हैं—विरोधी है। हम इन वृत्तियों को निवृत्त कर दें। अपने लिए यदि हमारी कोई कामना हो, तो उसे भी आप निवृत्त कर दें।

३०—यह संसार ही सागर है। इसमें चेतनों के शरीर ही नौकायें हैं, जो सर्वदा भ्रमण करती हैं। इन नौकाओं का भ्रमण तभी बन्द होता है, जब श्रीकृष्ण मन्थन करते हैं। श्रीकृष्ण का संकल्प ही मन्दराचल है। उनकी कृपा वासुकि सर्प है। उनके कटाक्ष उनके कर-कमल हैं, जिनसे वे मन्थन करते हैं। जैसे समुद्र से लक्ष्मीजी निकलीं, वैसे ही स्त्री के समान स्वरूप वाले अनन्यार्ह शेषरूप इस चेतन आत्मा को श्रीकृष्ण निकाल लेते हैं। यह आत्मा श्रीकृष्ण को लक्ष्मीजी से भी अधिक प्रिय हैं। इन आत्मा में कर्तृत्व भोक्तृत्वादि जो दोष हैं, वे ही विष हैं। उस विष को पान करने वाले श्रीकृष्ण का अहङ्कार ही शिव है। 'यत्करोषि' इस गीतोक्ति के अनुसार श्रीकृष्ण को

अपना कर्तृत्वादि अर्पण करके, अर्थात् अपने अहङ्कार को उनके अहङ्कार में मिलाकर ही जीव शान्ति पाता है। जैसे हनुमानजी ने अपने को दास मानकर ही लङ्कादाह किया। 'दासोऽहं कौशलेन्द्रस्य' यह उनकी तात्कालिक गर्जना थी।

दास उसे कहते हैं जिसने अपनी आत्मा और आत्मीय को अर्थात् अहंता ममता को भगवान् को अर्पित कर दिया हो। 'दासृ दाने' धातु से दास बनता है—'दासति ददाति हरये आत्मानं आत्मीयं च यः स दासः।' अनात्मभूत संसारी विषय है, वही अमृत है। उसे श्रीकृष्ण ने पुण्यात्मा ईश्वरवादी देवताओं को बाँट दिया। असुरगण उससे वंचित रहे। कारण वे भगवदाज्ञा-पालन-रूप धर्म से हीन थे। केवल कर्मवादी थे। कर्म को प्रधान मानते थे। उनकी भावना थी—'कर्मैव गुरुरीश्वरः।' अमृत भी सार असली अमृत चेतन आत्मा को ही श्रीकृष्ण स्वीकार करते हैं जैसे श्रीलक्ष्मीजी को स्वीकार किया और वे उनकी हृदय विलासिनी बन गईं।

श्रीगोदादेवी भी इस 'गीतावली' दिव्यप्रबन्धोक्त दिव्य-भावना के द्वारा श्रीकृष्ण के वक्षःस्थल में प्रवेश कर गईं। मकर संक्रान्ति के पुण्यकाल में श्रीगोदा ने श्रीकृष्ण भगवान् के वक्षःस्थल में प्रवेश किया। 'श्रीगोदा-गीतावली' में श्रीवागीशचार्य कृत स्वापदेश भावों को सङ्कलित कर अङ्कित किया गया है। ॥ श्रीगोदाचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥

—पं श्रीकेशवदेव शास्त्री, वृन्दावन

## श्रीभाष्य की श्रीमती टीका का पुनः मुद्रण प्रारम्भ जनवरी से

श्री श्री १००८ जगद्गुरु भाष्यकार भगवान् श्रीरामानुज स्वामीजी महाराज की अपूर्व कृति 'श्रीभाष्य की श्रीमती टीका' का प्रस्तुत पत्रिका 'अनन्त-सन्देश' के माध्यम से क्रमशः छः वर्ष तक प्रकाशित होता रहा—जिसकी सरस हिन्दी व्याख्या विद्वान् पण्डित डॉ० श्रीगिरिराज शास्त्री जी महाराज ने बड़ी प्रसन्नता से की, इस परिश्रम का परिणाम प्रथम-सूत्र पूर्ण हो गया, जिसे एकत्रित करके विगत मार्च में श्रीरङ्गमन्दिर के श्रीब्रह्मोत्सव पर तपोनिधि श्रीरङ्गाचार्यजी महाराज (काशी) के स्मृति महोत्सव में विद्वानों के समक्ष रखा गया और उसको पुस्तक रूप में प्रकाशित करने पर विचार किया गया, जिसका सभी ने समर्थन किया। किन्तु जब अर्थ व्यय की बात आई तो किसी ने साहस नहीं जुटाया, पीछे हट गये। एक-आध व्यक्ति ने जो कुछ रुपयों की सेवा स्वयं करनी चाही वे भी पीछे हट गये। इस स्थिति से प्रकाशक-अनुवादक-सम्पादक सभी का मन अपने सम्प्रदाय की इस दयनीय दशा को देखकर क्षुब्ध हो गया, परिणामतः इस अपूर्व ग्रन्थ का प्रकाशन बन्द हो गया। कई माह प्रतीक्षा करने परभी इस विराट् सम्प्रदाय में एकभी महापुरुष सामने नहीं आया, जिसने इस ग्रन्थ प्रकाशन के लिए कुछ त्याग करने की इच्छा व्यक्त की हो।

अभी दो माह पूर्व विहार के दो विद्वानों के विशेष आग्रह पर और कोई जिज्ञासुओं के विशेष आग्रह पर और अपने कर्तव्य को करते रहने की प्रेरणा से पुनः इसके प्रथम-सूत्र के आगे प्रकाशन प्रारम्भ किया जारहा है। 'भगवदिच्छा बलीयसी' भगवान् श्रीमन्नारायण जैसा चाहेंगे वैसा ही होगा, सम्प्रदाय के मौलिक ग्रन्थों को कौन पढ़ेगा, कौन पढ़ायेगा इसकी चिन्ता भी उन्हीं को करनी है। हमें तो अपनी गद्दी ही सुरक्षित रहने का प्रयत्न करना चाहिए ?

—सम्पादक

# श्रीवेंकटेश देवस्थान बम्बई में पट्टाभिषेक महोत्सव

卐

श्रीवेङ्कटेश देवस्थान, फणसवाड़ी मुम्बई दि० २-१२-९६ सोमवार को अनन्तश्री विभूषित वैकुण्ठवासी स्वामी श्रीकाञ्चीप्रतिवादि भयङ्कर सिंहासनाधीश श्रीमज्जगद्गुरु श्रीमद्गादी अनन्ताचार्य जी महाराज के तृतीय उत्तराधिकारी—रूप में श्रीमद् अनन्ताचार्यजी महाराज (श्रीबालाजी) को सं० २०५३ मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष ७ मघा नक्षत्र में सायंकाल ५ बजकर ४५ मिनिट पर पूर्ण वैभव के साथ युवराज घोषित करके पीठ पर बिठाया गया। इस समय देश के अनेक प्रान्तों से उपस्थित हुए श्री-महाराज के शिष्यों ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की और श्रीयुवराज स्वामीजी को बधाईयाँ दीं।

**'कलौ वेङ्कटनायकः'** श्रीवेङ्कटेश देवस्थान, फणसवाड़ी मुम्बई की स्थापना दि० ४ जून १९२७ को बड़े ही वैभव के साथ प्रातः स्मरणीय जगद्गुरु प्रतिवादि भयङ्कर मठाधीश विद्वान् गादी स्वामी श्रीमद् अनन्ताचार्यजी महाराज ने स्वोपार्जित धन से कराई। यहाँ मायानगरी के सात्विक धार्मिक मानवों को यह देवस्थान भूवैकुण्ठ सिद्ध हुआ। इस अद्भुत रचना को पूर्ण कराने में महाराजश्री के अनेक शिष्यों ने अपना अपूर्व योगदान प्रदान किया। देवस्थान तबसे अपनी पूर्ण मर्यादाओं के साथ चिरकाल तक चलता रहे, इसके लिए दि० २१ जून १९३५ ई० को महाराजश्री ने एक ट्रस्ट का निर्माण कर दिया जिसके अध्यक्ष पद पर श्रीमान् स्वामीजी महाराजश्री के साथ अन्य संभ्रान्त ट्रस्टीगण सम्मिलित हो गये और दिव्यदेश को सुचारु-रूप से चलाने का भार उठा लिया।

श्रीमान् जगद्गुरु गादी स्वामीजी महाराज के वैकुण्ठवास के पश्चात् इस गुरुतर भार को आपके यशस्वी सुपुत्र श्रीकाञ्ची प्रतिवादि भयङ्कर सिंहासनाधीश जगद्गुरु श्रीमद् कृष्णमाचार्यजी महाराज ने बड़ी ही योग्यता से परिवहन करते हुए श्रीसम्प्रदाय की श्रीवृद्धि की और शिष्यों को धर्मो-पदेश द्वारा अपने कर्तव्यका पूर्ण निर्वाह किया। समयानुसार आपने अपने मेधावी चिरंजीव श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज को अपने समस्त अधिकार प्रदानकर भगवान् श्रीवेङ्कटेशजी की सेवा के लिए अधिकारी घोषित कर दिया। सन् १९८७ से आप अपने पूर्ण अनुभव के साथ अपनी परम्परा-गत मर्यादाओं का पालन करते हुए श्रीसम्प्रदाय के धर्मप्रचार-प्रसार में पूर्ण मनोयोग से प्रयत्नशील हैं। आपने वर्तमान अध्यक्षपद एवं श्रीकाञ्ची प्रतिवादि भयङ्कर मठाधीश अनन्तश्री विभूषित श्री-मज्जगद्गुरु गादी श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज नाम के साथ लगे विरुदों की मर्यादा रखते हुए सम्पूर्ण भारत में फैले अपने शिष्यों और स्थानों की पूर्ण व्यवस्थायें करने को सार्थक प्रयत्न किये हैं। आपने अपने भक्तों के आग्रह पर अनेक धर्मप्रचार यात्रायें करके अनेक जीवों को श्रीमन्नारायण शरणागति प्रदानकर शङ्ख चक्राङ्कित किया। आपकी रायचूर, सोलापुर, सेडम, पुष्कर, रोल, वृन्दावन, मूंडवा, हैदराबाद, इलकल, गुलेदगुड्ड, सांगली, मौलासर, अमझेरा आदि की यात्रायें स्मरणीय हैं।

समय की गति और धार्मिक परिवेश की गति को पहचानते हुए आपने एकमात्र सुपुत्र चिरंजीव श्रीमद् अनन्ताचार्य (श्रीबालाजी) को अपना उत्तराधिकार का गुरुतर भार सौंपने का संकल्प किया। प्रतिभाशाली श्रीबालाजी का जन्म सन् १९६२ में घटिकाचलम् क्षेत्र जो विष्णु कांची से लगभग ४० किलोमीटर की दूरी पर है—में शुभ मुहूर्त में हुआ। आपकी शिक्षा विधिवत कालेज में सम्पन्न हुई और आपने बी.एस.सी परीक्षा पासकर सी.ए. कोर्स पूर्ण किया। आधुनिक शिक्षा में पारंगत होने के साथ-साथ आपमें अपनी आचार्य परम्परागत समस्त गुण विद्यमान हैं। आपके गृहस्थ जीवनके कार्यों की पूर्णता को देखकर पूज्य आचार्यचरणने आपको सम्प्रदाय सेवाके लिए प्रेरित किया। उनकी आज्ञा को शिरोधार्य करके अपने परम्परानुगत आचार्योचित सदाचार तथा श्रीवेङ्कटेश भगवान् की सेवा के साथ सम्प्रदाय सेवा का भार उठाने को तैयार हो गये। इस शुभ सूचना से सम्पूर्ण शिष्य समुदाय में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी। पट्टाभिषेक का शुभमुहूर्त निकाला गया, आह्वानपत्रिका प्रकाशित हुई, सभी को प्रेषित की गयी, जिसका प्रारूप इस प्रकार था।

॥ श्रीपद्मावतीसमेत श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः॥

## युवराजपट्टाभिषेक महोत्सवाह्वानपत्रिका

जगद्गुरु श्रीभगवद्रामानुजमुनीन्द्रसंस्थापित चौहत्तर सिंहासनाधिपतियों के अन्तर्गत श्रीमुडुम्बे नम्बि वंश के मुक्ताफल, श्रीरामानुज यतिवरापरावतार श्रीमद्वरवरमुनीन्द्र प्रतिष्ठापित अष्टदिग्गजाचार्यों में मुख्य, श्रीमल्लोकगुरु महावंशोत्पन्न, श्रीभाष्यसिंहासनाधिपति, श्रीरम्यजामातृयतिवर की परमकृपा से प्राप्त श्रीवेणुगोपाल भगवान् के अन्तरंगकैंकर्यनिष्ठ, अनन्यसाधारण प्रतिवादि भयङ्कर विरुदालंकृत, श्रीमदखिलाण्डकोटिब्रह्माण्डनायक श्रीवेंकटेश भगवान् की असीम कृपा से प्राप्त छत्र, चामर, काहली, भद्रासनादि से-पालकी-सुशोभित आचार्य श्रीमद्वरवरमुनीन्द्र की आज्ञा से प्रसिद्ध श्रीवेंकटेश सुप्रभातस्तोत्र, प्रपत्ति, मङ्गलाशासन, स्तोत्र के रचयिता श्रीहस्त्यंद्रिनाथाचार्य श्रीअण्णा स्वामीजीके सिंहासनमें विराजमान, प्रसिद्ध वैभव जगद्गुरु गादि श्रीमदनन्ताचार्य स्वामीजी के प्रपौत्र, उन श्रीमदनन्ताचार्यजी के सुपुत्र श्रीमत्कृष्णमाचार्य के सुपौत्र, उन श्रीमत्कृष्णाचार्यजी के सुपुत्र वर्तमान गादिस्वामी श्रीमद् श्रीनिवासाचार्यजी के सुपुत्र श्रीमदनन्ताचार्य का इस प्र० भ० गद्दी के उत्तराधिकारी के रूप में युवराज कराने का निश्चय किया गया है। यह पट्टाभिषेक वैभव आगामी मिति सं० २०५३ मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष ७ सोमवार तदनुसार दि० २-१२-९६ को श्रीवेङ्कटेश देवस्थान, मुम्बई में सायंकाल ४-३० बजे सम्पन्न होगा। अतः आप गद्दी के सभी शिष्य प्रशिष्यगण तथा श्रद्धालु महानुभाव सम्मिलित होकर सम्पन्न करावें तथा आचार्यानुग्रह को प्राप्त करें। इति निवेदक

—श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर गद्दी के शिष्यगण श्रीरामानुज श्रीवैष्णवदास

स्वामी वासुदेवाचार्य विद्या भास्कर', स्वामी राघवाचार्य, गदाधर पारीक, लक्ष्मीनिवास गनेड़ीवाल, श्रीनिवास बद्रुका, रामनारायण सोमानी, श्रीकान्त गोपालदास 'मन्त्री' संपतकुमारसोमानी रामनारायण नथमल सोमानी, गोविन्दराम दरक, हनुमानबक्स गिलडा, जयकिशन बूब, सम्पतकुमार बंग, वेणुगोपाल इन्नानी, भँवरलाल मालू, सौभाग्यमल मालू, मधुसूदन सारडा, श्रीनारायणलाल असावा, लक्ष्मीनारायणजी बूब, लक्ष्मीनिवासजी तापड़िया, तुलसीरामजी मूंदड़ा, नारायणदासजी बूब घनश्यामदासजी दरक, रामेश्वरजी दरक, रामनिवासजी गिरधारीलालजी बूब।

श्रीवेंकटेशदेवस्थान बम्बई के संस्थापक
अनन्त श्रीविभूषित वैं० वा० श्रीस्वामी श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर
सिंहासनाधीश्वर जगद्गुरु गादी

**श्रीमद् अनन्ताचार्यजी महाराज**

तनयन्—
श्रीवत्सवंशकलशोदधिपूर्णचन्द्रं,
श्रीकृष्णसूरिपदपंकजभृङ्गराजम् ।
श्रीरङ्गवेङ्कटगुरूत्तमलब्धबोधम्,
भक्त्या भजामि गुरुवर्यमनन्तसूरिम् ॥

अनन्त श्रीविभूषित वैं० वा० स्वामी श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर
सिंहासनाधीश जगद्गुरु श्रीमद् कृष्ण[illegible]जी महाराज
संस्थापक श्रीस्वामीजी के सुपुत्र (द्वितीय[illegible]स्थ)

तनयन्—
श्रीवत्सवंशकलशोदधिपूर्णचन्द्रं
नित्यं त्वनन्तगुरुवर्यतनूजरत्नम् ।
श्रीमज्जगद्गुरुकृपापरिलब्धबोधं
श्रीकृष्णदेशिकमहं शरणं प्रपद्ये ॥

श्रीकांची प्रतिवादि भयङ्कर सिंहासनाधीश
अनन्तश्री विभूषित श्रीमज्जगद्गुरु गादी श्रीस्वामी

**श्रीनिवासाचार्य जी महाराज**

श्रीवेंकटेश देवस्थान के वर्तमान अध्यक्ष

तनयन्—

श्रीवत्सवंशकलशोदधिपूर्णचन्द्रं
श्रीकृष्णसूरितनयं सुधियं सुशीलम् ।
श्रीमज्जगद्गुरुदयेक्षणलक्ष्यधन्यं
श्री श्रीनिवासगुरुमन्वहमाश्रयेऽहम् ॥

श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर सिंहासनाधीश अनन्तश्री विभूषित
श्रीमज्जगद्गुरु गादी श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज
वर्तमान अध्यक्ष के सुपुत्र युवराज श्रीस्वामी

**श्रीमद् अनन्ताचार्यजी (श्रीबालाजी) महाराज**
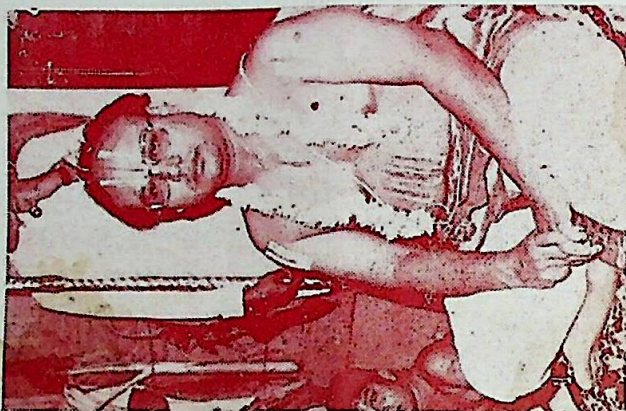
आप दि० २-१२-९६ को श्रीवेङ्कटेश देवस्थान बम्बई की
गद्दी पर युवराज पद पर अभिषिक्त हुये ।

तदनुसार दिनाङ्क २ दिसम्बर को प्रातः से ही श्रीवेंकटेश मन्दिर मुम्बई को पुष्पों, तोरण, केला के वृक्षों से विशेष रूप से सुसज्जित किया गया। विशिष्ट चौक रंगोलियां बनायी गयीं। भगवान के लिए विशेष राजभोग की तयारी हुई। देश के अनेक प्रान्तों से उपस्थित श्रीवैष्णव महानुभावों के आवास आदि की समुचित सुव्यवस्था की गयी थी प्रातः काल से ही मंगल ध्वनि मन्दिर प्रांगण में गूँज रही थी। मध्याह्न में समागत भागवतों स्थानीय श्रीवैष्णवों ने मन्दिर प्राङ्गणमें ही भगवत्प्रसाद प्राप्त किया। इस समय श्रीमान् जगद्गुरु स्वामी श्रीविद्याभास्करजी की उपस्थिति विशेष आनन्दप्रद थी। उन्होंने इस स्वाचार्य महोत्सव में भक्तों को स्वयम् प्रसाद परिवेषणकर सन्तोष प्रदान किया, इसकी झाँकी श्रीस्वामीजी महाराज ने पधार कर देखी। श्रीजमाई स्वामीजी अस्वस्थ होते हुए भी इस समय पूर्णयोग से कार्यरत थे।

**पट्टाभिषेक**—दि०२।१२।९६ सोमवार को सायं ५ बजे श्रीस्वामीजी महाराज के श्रीवेंकटेश देवस्थान स्थित तीसरे मंजिल के आवास पर गणमान्य भागवत श्रीविद्याभास्करजी सहित छत्र, छड़ी, चमर, काहली वाद्य, मसाल आदि के साथ उपस्थित हुये और आचार्यश्री महाराज तथा श्रीयुवराज स्वामीजी से पट्टाभिषेक के लिए उत्सव मण्डप में पधारने की प्रार्थना की (इस समय श्रीविद्याभास्कर महाराजने समस्तविरुद सहित संस्कृतभाषामें यह प्रार्थना समस्त भागवतोंकी ओरसे निवेदन की)उनके साथ श्रीमान् राजगोपाल सोमानी सोलापुर, श्री पं० केशवदेव शास्त्री, श्रीमधुसूदन सारड़ा साँगली, श्रीरामनारायण सोमानी, श्रीलक्ष्मीनिवास तापड़िया, श्रीघनश्यामदास दरक आदि अनेक भागवत स्तोत्रपाठ और जयघोषों के साथ उभय आचार्यों पर पुष्पवृष्टि करते हुए, उत्सव मण्डप की ओर पधारे। वहाँ उपस्थित भक्तों ने आपका स्वागत किया। आचार्य मण्डप में श्रीवेणुगोपाल भगवान् दिव्य झाँकी दे रहे थे। यहाँ रजत सिंहासन पर वर्तमान पीठाधीश श्री श्रीनिवासाचार्यजी महाराज विराजमान हुये निकट की पीठ पर श्रीयुवराज स्वामीजी। आज के महोत्सव समारोह का संचालन जगद्गुरु श्रीवासुदेवाचार्य 'विद्याभास्कर' महाराज, अयोध्या ने किया। उन्होंने सभी को शान्त होने का निर्देश किया। पश्चात् वर्तमान पीठाधीश श्रीस्वामी ने अपना युवराज पद घोषणा पत्र पढ़कर सभी महानुभावों को सुनाया, जिसका सभी ने हार्दिक स्वागत किया। श्रीस्वामीजी ने अपनी ओर से प्रथम शाल उढ़ाकर युवराज को सम्मानित किया और विधिपूर्ण की। तदुपरान्त श्रीयुवराज स्वामी जी मन्दिर में बहुमान प्राप्त करने के लिए पधारे। प्रमुख द्वार पर ही मन्दिर के आचार्यों ने आकर रजत के मंगल कलश से उनका अभिनन्दन कर उन्हें ससम्मान श्रीवेंकटेश भगवान की सन्निधि में ले गये, जहाँ उन्हें विशेष उत्तरीय, माला, चन्दन, श्रीशठकोप प्रदान किये गये। तदुपरान्त क्रमशः श्रीपद्मावतीदेवी, श्रीशयनरङ्गनाथ की सन्निधि में बहुमान प्राप्त कर भगवान की प्रदक्षिणा क्रम से भाष्यकार श्रीरामानुज स्वामीजी की सन्निधि में बहुमान प्राप्त करके गरुड़ स्तम्भ की प्रदक्षिणा पूर्वक अपने प्रपितामह श्रीवेङ्कटेशदेवस्थान के संस्थापक अनन्तश्री विभूषित वै० वा० श्रीगादी स्वामी ज०गु० श्रीकांची प्र० भ० मठाधीश श्रीमद्अनन्ताचार्यजी की सन्निधि और श्रीवेणुगोपाल भगवान् के सान्निध्य में यहाँ पर भी बहुमान आशीर्वाद प्राप्त कर अपनी गद्दियों पर विराजे। इस समय सभा संचालक महोदय के अनुरोध पर दाक्षिणात्य आचार्यों ने वैदिक मंगलाचरण किया। तदनन्तर श्रीविद्याभास्कर महाराज ने समय अधिक होने के कारण दिव्यदेशों आदि से समागत भक्तों के बहुमान क्रम को प्रारम्भ किया।

**बहुमान**—परम्परानुसार ऐसे अवसरों पर अपने आमन्त्रणानुसार अनेक स्थानों, मठों, दिव्यदेशों से बहुमान आते हैं जो नवागत उत्तराधिकारी को प्रदान किये जाते हैं। इस श्रृङ्खला में सर्वप्रथम श्रीसम्पतकुमार भगवान मेलकोटा से, श्रीकांची से श्रीयथोत्कारी भगवान्, पंचसार क्षेत्र से श्रीसारनाथ भगवान् का श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान् सोलापुर का बक्सर दिव्यदेश से श्रीवैकुण्ठनाथ भगवान की ओर से श्रीजगद्गुरु श्रीत्रिदण्डी श्रीमद्विष्वक्सेनाचार्यजी महाराज का, कोसलेश-सदन अयोध्या पीठाधीश्वर ज० गु० स्वामी वासुदेवाचार्य 'विद्याभास्कर' महाराज का चकिया कुण्डा के स्वामीजी का, पं० श्रीकेशवदेवजी शास्त्री सम्पादक–अनन्त-सन्देश, वृन्दावन का बहुमान प्रदान किया गया। श्रीसेठ श्रीरामविलास तोष्णीवाल, श्रीलक्ष्मीनिवास तापड़िया सेडम, श्रीराजगोपालजी सोमानी सोलापुर तथा श्रीजगदीश स्वामीजी, श्रीदेवीचन्द इन्नानी, श्रीगोपाल इन्नानी हैदराबाद, श्रीघनश्याम दास दरक, इलकल, श्रीरामकुमारबूब स्वर्ण अंगूठी से, श्रीश्यामसुन्दर मूँदडा रायचूर के और अन्य भक्त, श्रीरामनारायण बूब, श्रीराठीजी, श्रीकृष्ण बूब, श्रीमती भंवरीबाई रायचूर, श्रीओम् नारायण जाजोदिया इन्दौर, श्रीबद्रीनारायणजी लढ्ठा, श्रीगोपालजी इन्नानी रोल, श्रीसुमन्त कुमार गणेणी वाल मन्दसौर, श्रीमती जमुनाबाई मूँदड़ा रायचूर, श्रीरामनिवासजी सोमानी, श्रीवेंकटेशजी सोमानी, श्रीरंगनाथजी सोमानी, श्रीसावित्री बाई मन्दसौर, श्रीरामकुमारजी कंकानी विभण्डी, श्रीवल्लभदास लक्ष्मीदास अमझेरा, श्रीघनश्यामजी अमझेरा, श्रीसत्यनारायण काबरा बम्बई, श्रीमती सीताबाईजी तापड़िया बम्बई, श्रीमती मनोरमा देवी जी सोमानी बम्बई, श्रीमती लक्ष्मीबाईजी सोमानी बम्बई, श्रीरामनारायणजी सोमानी बम्बई, श्रीमती भगवती बाई सोमानी, श्रीनारायणलालजी असावा, श्रीसोहनलालजी बल्दुआ, श्रीगदाधरजी पारीक बम्बई, श्रीदयारामजी अमझेरा, श्रीबालारामजी बंग बम्बई, झूमरलाल भण्डारी गुलेदगुड्ड, श्रीमुन्नालालजी गिल्डा, श्रीकांतजी मन्त्री, श्रीहरिकिशनजी चांडक बम्बई, श्रीसुषमा बाईजी, श्रीनिवासजी अयंगा, खार बम्बई, श्रीसरस्वती बाईजी आदि ने अपने-अपने प्रेम पुष्पों को सर्मपित करके नवागत युवराज स्वामीजी का अभिनन्दन किया।

इस कार्यक्रम की पूर्णता के लिए श्रीमान् सिंहासनाधीश श्रीगादी स्वामी श्री श्रीनिवासाचार्य जी महाराज ने उपस्थित महानुभाव भक्तगणों को सम्बोधित करते शुभाशीष प्रदान किया और ज.गु. श्रीरामानुज स्वामीजी के अपरावतार श्रीमान् प्रतिवादि भयंकर सिंहासनाधीश ज० गु० श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज के यशोवैभव का स्मरण कराया साथ ही शिष्यों से आचार्य मर्यादा को और आदर्श रूप में रखने का प्रयास करना चाहिए कहा। इस अवसर पर सभा को सम्बोधित करते हुए पं० श्रीकेशवदेवजी शास्त्री वृन्दावन ने कहा कि श्रीपट्टाभिषेक का यह समारोह बड़े ही हर्ष का विषय है। आज नये उत्तराधिकारी के रूप में श्रीबालाजी महाराज को प्राप्त करके हमें प्रसन्नता है। भक्तों ने इन्हें अनेक पुष्पमालायें अर्पित की हैं। इसका एक तात्पर्य है कि आपके सभी शिष्य पुष्प है और श्रद्धा के धागे से एकत्रित हो आपको माला रूप में सर्मपित है। अब इनका पोषण करना इन्हें प्रेम से संचित करके मनोहारी बनाकर रखना आपका दायित्व है। सभा का संचालन कर रहे ज० गु० श्रीस्वामी वासुदेवाचार्यजी महाराज 'विद्याभास्कर' अयोध्या ने भी अपने भाव कुसुमों को प्रेषित करते हुये कहा कि भक्ति में प्रीति स्वतः ही होती है। श्रीरामानुज स्वामीजी ने लिखा है। श्रीमान् गादी स्वामीजी में हमारी प्रीति है, इन्हें देखते ही प्रसन्नता होती है। हमारा सौभाग्य है हमारे स्वामीजी बड़े दिव्य हैं। और श्रीयुवराज स्वामीजी के दर्शन से तो प्रेम स्वतः ही उदय होने लगता है। अब में अपने आज के समारोह के प्रमुख आकर्षण श्रीयुवराज स्वामीजी से निवेदन करूँगा कि वे भक्तों से

# बम्बई में श्रीपट्टाभिषेक के छाया-चित्र—

श्रीवेङ्कटेश देवस्थान, बम्बई में श्रीपट्टाभिषेक की घोषणा के बाद श्रीयुवराज स्वामी श्रीमद् अनन्ताचार्य (श्रीबालाजी) महाराज का श्रीवेंकटेश देवस्थान के अर्चक मङ्गल कलश के साथ मन्दिर के प्रमुख द्वार पर अभिनन्दन करते हुए।
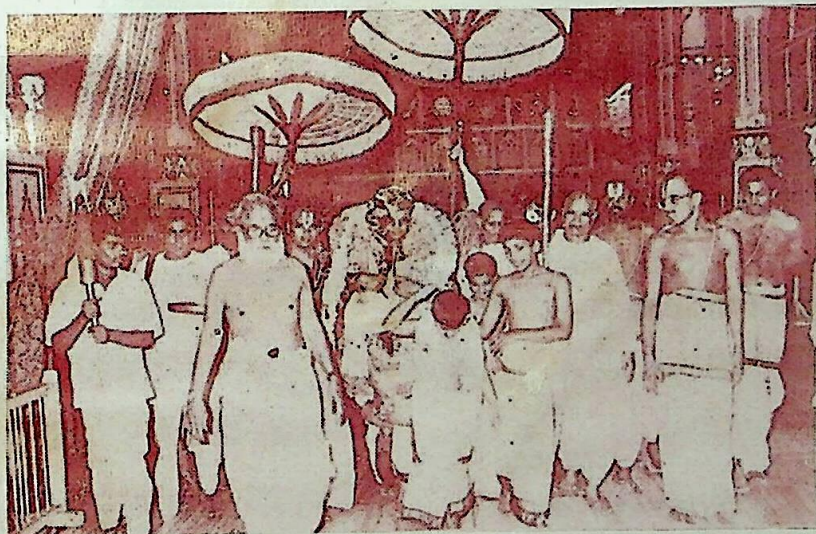
श्रीवेङ्कटेश भगवान् की सन्निधि आदि से बहुमान प्राप्त करके वीथिका में श्रीयुवराज स्वामीजी अपने परिकर एवं जमाई स्वामी सहित।

## श्रीवेङ्कटेश देवस्थान बम्बई में पट्टाभिषेक के छाया-चित्र :—
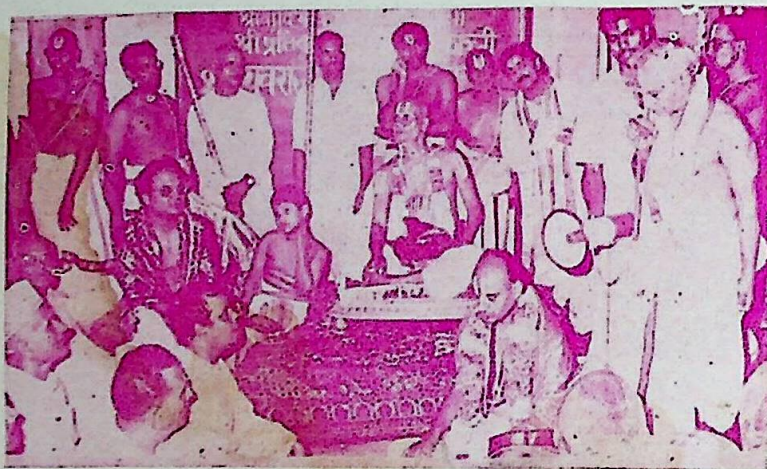
श्रीपट्टाभिषेक के समय सभा के मध्य रजत सिंहासन पर विराजमान वर्तमान सिंहासनाधीश ज० गु० गादी श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज उनके दाँये श्रीयुवराज स्वामी श्रीमद् अनन्ताचार्य (बालाजी) महाराज उत्तरीय ओढ़े,सभा संचालन करते पुष्पमाला धारण किये, ज.गु. श्रीस्वामी वासुदेवाचार्यजी महाराज 'विद्याभास्कर' अयोध्या, माइक पर सभा को सम्बोधित करते हुये विद्वान् पं० श्रीकेशवदेव शास्त्री, वृन्दावन, सम्पादक 'अनन्त-सन्देश' एवं उपस्थित शिष्य-महानुभाव आदि।
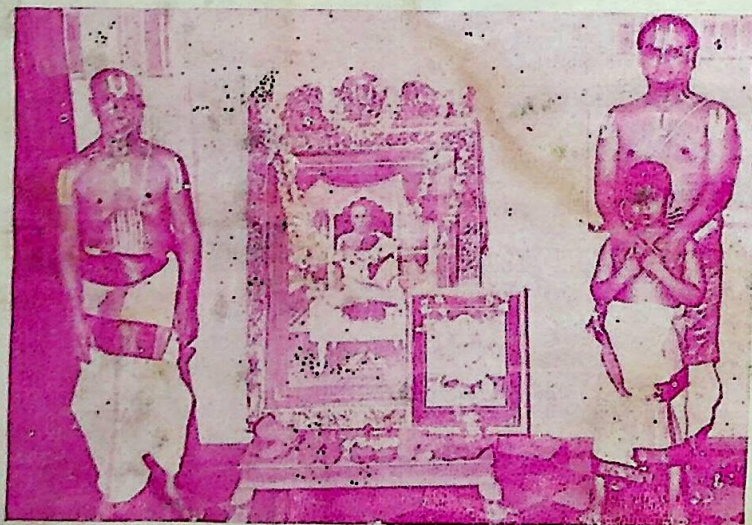
इस दुर्लभ चित्र में आचार्यत्रय के साथ श्रीमद् अनन्ताचार्य (श्रीबालाजी) महाराज-युवराज स्वामी अपने चिरंजीव के साथ।

कुछ कहें—श्रीयुवराज स्वामी (श्रीबालाजी) मंगल श्लोक के पश्चात-मुझे प्रसन्नता है मैं हिन्दी बोलने का अच्छा ज्ञान प्राप्त करके सम्प्रदाय की सेवा करूँगा सभी को धन्यवाद और कुछ शब्द अंग्रेजी में भी बोले गये। हमारे श्रीयुवराज स्वामीजी का हिन्दी अध्ययन का प्रयास तेजगति से चल रहा है वे शीघ्र ही शिष्यों के मध्य हिन्दी में प्रचलन कर सकेंगे।

सभा संचालक श्रीस्वामीजी ने कहा कि आज समय का अभाव रहा हम अपने युवावक्ता आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा जी को समय न दे सके आज उनका सहयोग विशेष रहा हैं। श्रीजमाई स्वामी जी ने तो अपनी अवस्था से अधिक परिश्रम किया है। मन्दिर के मैनेजर श्रीमोघे साहब के साथ-२ समस्त परिकर का परिश्रम स्मरणीय है। महोत्सव की पूर्णता पर ज० गृ० गादी श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्य जी महाराज ने अपनी ओर से सभी को सुन्दर जरी के दक्षिणी पटका प्रदान कर आर्शीवाद प्रदान किया। इसी के साथ श्रीपट्टाभिषेक महोत्सव पूर्ण हुआ तत्पश्चात जिस मर्यादा से श्रीमान् स्वामीजी की अगवानी करके उन्हें लाया गया था उसी सम्मान से उन्हें उनके श्रीनिवास स्थान तक पहुँचाने गये, वहाँ पर श्रीस्वामीजी की ओर से सभी को मोदक गोष्ठी करायी गयी। इस उत्सव में काँची से श्रीस्वामीजी का समस्त कुटुम्ब परिवार उपस्थित था, इस प्रकार सायं ७ बजकर ५० मिनिट पर यह समारोह पूर्ण हो सका इस महोत्सव में भाग लेने के लिए इस आंखों देखे हाल का लेखक अपने पूज्यपिता प० श्रीकेशवदेवजी शास्त्री जो इसी पत्र के सम्पादक भी है के साथ बम्बई गया यात्रा के पूर्व में बना उत्साह व्यवस्था की उदासीनता में पूर्ण न हो सका, यात्रा सुखद ही कही जा सकती है।

लेखक—आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा, श्रीधाम वृन्दावन
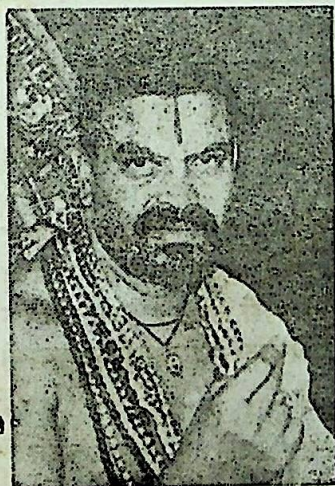
## श्रीद्वारकापुरी में श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण ज्ञानयज्ञ का आयोजन

श्रीद्वारकापुरी में दिनांक २६ जनवरी ९७ से पूर्णवैभव के साथ श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण ज्ञानयज्ञ का आयोजन किया जा रहा है जिसमें श्रीनागौरिया मठाधीश जगद्गुरु वैं०वा० श्री-स्वामी केशवाचार्यजी महाराज के कृपापात्र अनन्तश्री विभूषित जगद्गुरु श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज प्रधान व्यासासन पर विराजमान होकर भगवान श्रीकृष्ण के पावन चरित्रों की अद्‌भुत रसमयी कथा का पवित्र प्रसाद वितरित करेंगे। नैष्ठिक ब्रह्मचारी सन्त के दर्शन एवं प्रवचन सुनकर निश्चय ही आपका विशेष तृप्ति होगी।

इस आयोजन में श्रीसुदर्शन महायज्ञ को श्रीवेङ्कटाचार्यजी अपने साथियों से सम्पन्न करेंगे, और श्रीमद्‌भागवतजी का सस्वर पाठ श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज सम्पन्न करायेंगे। इस आयोजन को श्रीमती मनोरमादेवी जी सोमानी (धर्मपत्नी डॉ० जुगलकिशोर सोमानीजी) श्रीनिकेतन मुम्बई सम्पन्न करायेंगीं, आपकी धार्मिक सेवायें वार्ता का विषय बनती जा रही हैं। आप महानुभावों से सादर निवेदन है कि आयोजन में पधारकर अपनी उपस्थिति से शोभा सम्बर्धन करें।

卐 कथा समय—प्रातः ९ से १२ बजे तक ❀ सायं ३ से ६ बजे तक। विनीत—पं० केशवदेव शास्त्री

# विविध समाचार :—

## श्रीनाथद्वारा में श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ सम्पन्न

राजस्थान के मेवाड़ क्षेत्र में भगवान के चार धाम हैं, जिनमें श्रीनाथजी को भोग अधिक लगता है अतएव उन्हें राजस्थान के श्रीजगन्नाथजी कहा जाता है। बड़ा वैभवशाली भगवद्धाम है। यहाँ सहस्रों यात्री श्रीनाथजी के दर्शन करने प्रतिदिन आते हैं। यह नगरी वैष्णवों भगतों की नगरी कहलाती है। यहाँ सदैव श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ समारोह चलते रहते हैं।

श्रीनाथद्वारा में श्रीमती भानुमती कान्तिलाल बूसा भागवत समिति की स्थापना हुई। इसी समिति के द्वारा कोटा (राज०) निवासी श्रीकृष्ण कथा मर्मज्ञ भागवत-भूषण, श्री पं० स्वामी मदन-मोहनाचार्यजी महाराज को आमन्त्रित किया गया। आपने वैष्णव भक्तजनों का आमन्त्रण स्वीकार कर दि० १५।११।९६ से दि० २१।११।९६ ई० तक वल्लभकाटेज नाथद्वारा में श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ का आयोजन सम्पन्न किया।

आपके श्रीमुख से कथामृत धारा ऐसी प्रवाहित हुई जिसमें गोता लगाकर समस्त श्रोतागण आनन्दमग्न होते रहे। आपने श्रीकृष्ण कथा रस का ऐसा पान कराया कि यहीं गोलोकधाम का अनुभव होने लगा। आपके साथ पारायणकर्ता स्थानीय विद्वज्जन तथा साथ में आये विद्वज्जनों ने अपने पाठ स्वाध्याय से, संगीत कलाकारों ने अपने वाद्य वादन से जिसमें स्थानीय संगीत व्याख्याता श्री-श्यामसुन्दरजी कुमावत ने अपने वाद्यवादन से कथा में चार-चाँद लगाये। वैसे तो अनेक वक्ताओं द्वारा श्रीकृष्ण सुधा वर्षण होता ही रहता है, परन्तु पण्डित श्रीस्वामी मदनमोहनाचार्यजी कोटा निवासी द्वारा कथा की शैली भावाभिव्यक्ति,भक्तिरस की सरसता प्राप्त हुई वह एक अनूठी एवं समस्त कथा वाचकों को अनुकरणीय ही रही। स्वयं आचार्यजी अत्यन्त नम्र सरस, भावुक श्रीवैष्णव हैं। 'विद्या ददाति विनयं' राजस्थान में अन्य धाम इस प्रकार हैं—श्रीचारभुजाजी इन्हें श्रीबद्रीविशाल, कांकरोली को श्रीद्वारकाजी कहा जाता है। यहाँ रावसागर द्वारका के अनुरूप है। श्रीइकलिंगेश्वर को श्रीरामेश्वर संज्ञा दी जाती है, और भी वैभवशाली स्थानों में श्रीरोकड़िया हनुमानजी की प्रसिद्धि है। श्रीरूपनारायण भगवान को ब्रजराज दाऊजी ही माना जाता है। सम्पूर्ण भारत इस धार्मिक एकता से आबद्ध है।

विनीत—**बाबूलाल ब्रजवासी**

## प्राचीन मन्दिर की ओर ध्यान दें

पण्डित दामोदरदास, ग्राम-कोषण, जिला-भिण्ड (म० प्र०) समस्त भक्तों से अपील करते हैं कि उपरोक्त ग्राम में एक श्रीलक्ष्मीनारायण भगवान का प्राचीन मन्दिर नष्ट हो रहा है। मैं श्रीवैष्णव पण्डित हूँ। वृन्दावन श्रीहरिदेवजी मन्दिर में अध्यापक था। अब शरीर वृद्धावस्था के कारण चलता नहीं है। मेरी प्रार्थना पर श्रीरङ्ग मन्दिर वृन्दावन के स्वामीजी महाराज श्रीगोवर्धनपीठाधीश ने और वृन्दावन के श्रीभागवतजी विद्वान् श्रीरामानुजाचार्यजी महाराज सेवाकुञ्ज सौ सौ रुपया प्रतिमास भेजते हैं। मन्दिर के जीर्णोद्धार तथा प्राचीन भगवत् विग्रहों की सेवा पूजा की समुचित व्यवस्था हेतु मेरी प्रार्थना है। जो सज्जन इस पुनीत कार्य में योगदान करेंगे उनका नाम उल्लेखनीय सेवा में अङ्कित होगा।

प्रार्थी—**पं० दामोदरदास**, ग्राम-कोषण, जिला-भिण्ड (म०प्र०)

## श्रीरङ्गमन्दिर वृन्दावन में श्रीवैकुण्ठोसव प्रारम्भ

मार्गशीर्ष श्रीवैकुण्ठ एकादशी व्रत दि० २०-१२-९६ शुक्रवार को श्रीवैकुण्ठोत्सव प्रारम्भ हुआ
प्रातः ५-३० बजे भगवान् श्रीगोदारङ्गमन्नार अपने विमान में विराजे हुए सहस्रों भक्तों के साथ श्री-
वैकुण्ठ द्वार से वैकुण्ठ में श्रीशठकोपमुनि की अगवानी करने पधारे। द्वार के समक्ष सभी आल्वार सन्त
सामने उपस्थित थे। सबको साथ लेकर श्रीभगवान् वैकुण्ठ मण्डप में पधारे जहाँ श्रीशठकोप स्वामी
जी अपने प्रिय शिष्यों के साथ थे। इस मण्डप में मारवल फर्स की सेवा श्रीमनोरमादेवी सोमानी
(धर्मपत्नी डॉ. जुगलकिशोर सोमानी, मुम्बई) ने भगवदाज्ञया भगवत्कैङ्कर्यरूप से भगवन्मुखोल्लासार्थं
कराया है। निश्चय ही श्रीभगवान् इस सेवा से सन्तुष्ट होंगे।

—सम्पादक

दस दिवस के इस श्रीवैकुण्ठोत्सव में पाँच दिन भगवान् श्रीराम की और पाँच दिन भगवान्
श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं की आकर्षण झाँकियों के दर्शन होते हैं। अन्तिम दिन श्रीशठकोप स्वामी
जी को भगवान् के श्रीचरणों की प्राप्ति होती है सहस्रों भक्त इस उत्सव से परमानन्द का लाभ प्राप्त
करते हैं। श्रीवैकुण्ठोत्सव की समाप्ति दि० २६-१२-९६ रविवार को होगी।

## श्रीराधारमण मन्दिर वृन्दावन में विद्वत् पूजन

दि० ९-११-९६ मार्गशीर्ष कृष्णा १४ सं० २०५३ सोमवार को श्रीराधारमणजी की सन्निधि में
विद्वत् पूजन कार्यक्रम गोस्वामी गौरकृष्णजी के सुपुत्र श्रीअनिलकुमार गोस्वामी की प्रेरणा से श्रीसत्य-
नारायणजी तुलस्यानने अपनी धर्मपत्नी की स्मृति में आयोजित किया। मङ्गलाचरण डा. प्राणगोपाल
जी आचार्य ने किया। कार्यक्रम का संचालन श्रीपद्मनाभजी गोस्वामी ने किया। गोस्वामी श्रीकृष्णा-
श्रयजी ने विद्वानों की महिमा का वर्णन करते हुए स्वागत भाषण किया। श्रीगौरकृष्ण गोस्वामीजी
ने तुलस्यान परिवार के मङ्गल की कामना करते हुए विद्वत्तापूर्ण उद्बोधन किया। श्री श्रीनाथजी
शास्त्री, डा. श्रीवासुदेवकृष्णजी चतुर्वेदी ने राधारमणाश्रित गोस्वामी विद्वानों की सारस्वत सेवा का
चिन्तन किया। जज स्वामी विपिनचन्द्राचार्यजी, श्रीमहेशानन्दजी भी कार्यक्रम में उपस्थित थे।
लगभग मथुरा-वृन्दावन के सौ ब्राह्मण-विद्वानों का पूजन तुलस्यानजी ने किया, प्रत्येक विद्वान् को एक
ऊनी उत्तरीय तथा पञ्चाशत मुद्रा दक्षिणा अर्पित की। 'अनन्त-सन्देश' सम्पादक विद्वत्प्रवर—
श्रीकेशवदेवजी शास्त्री ने भी मङ्गलकामना की। श्रीदामोदरलालजी गोस्वामी के चित्रपट का
विधिवत् पूजन शास्त्रीय पद्धति से सम्पन्न कराया गया, तदुपरान्त सभा विसर्जित हुई।

—डॉ. गिरिराज शास्त्री

## श्रीवैष्णव व्रतोत्सवादि-निर्णय का नव प्रकाशन

इस पुस्तक का प्रकाशन हो गया है। इस पुस्तक का मूल आधार वै० वा० श्रीकांचीप्रतिवादि
भयङ्कर पीठाधीश्वर अनन्तश्री स्वामी श्रीमज्जगद्गुरु गादी श्रीमद् अनन्ताचार्यजी महाराज द्वारा
लिखित श्रीवैष्णव व्रतोत्सवादि निर्णय ही है। उसीके अधार पर कुछ स्पष्टीकरणके साथ उनके प्रशिष्य
श्रीपाञ्चरात्रागम विशारद याज्ञिक सम्राट् पं० श्रीनाथप्रपन्नाचार्य, दधीचाश्रम, छपरा (बिहार) ने इसे
प्रकाशित किया है। इससे एकादशी आदि निर्णयोंमें विशेष सहायता मिलेगी। जिनको इस प्रकाशनमें
कोई जिज्ञासा जान पड़े वे पण्डितजीके उक्त पते पर लिखें, जिससे जिज्ञासा शान्त हो सके।—सम्पादक

## विराट् श्रीसीताराम महायज्ञ सम्पन्न

ग्राम—सजवन सलेमपुर, पो० काबरा खुर्द, जिला-पलामू (बिहार) की जनता ने यज्ञ समिति के माध्यम से विश्वकल्याणार्थ श्रीसीताराम महायज्ञ का विराट् आयोजन परमपावन सोणभद्र महानदी के दक्षिण तट पर महायोगिराज श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्री १००८ श्रीमद्वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्योभय-वेदान्तप्रवर्तकाचार्य श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य सत् सम्प्रदायाचार्य जगद्गुरु भगवदनन्तपादीय श्रीमद्विष्वक्सेनाचार्य श्रीत्रिदण्डी स्वामीजी महाराज के तत्वावधान में मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशी शुक्रवार दि० २०-१२-९६ से प्रारम्भ कर मार्गशीर्ष पूर्णिमा मंगलवार दिनांक २४ - १२ - ९६ तक सुसम्पन्न हुआ।

इस श्रीसीताराम यजनात्मक भगवदीय प्रार्थना में अनेक सन्त महात्मा विद्वान् उपदेशकों ने पधारकर अपने उपदेशों से भारतीय जनता को उद्बोधन प्रदान किया क्योंकि आज भारतीयजन भौतिकवाद की चकाचौंध में दिग्भ्रष्ट हो गये हैं। हमने वैदिक धर्म को सर्वथा न अपनाकर स्वेच्छाचारिता को अपना लिया है, इसी से चतुर्दिक् भ्रष्टाचार, कदाचार, पापाचार का प्राबल्य होने जा रहा है। हमें आज के ब्रह्मर्षि योगिराज श्रीत्रिदण्डी स्वामीजी महाराज के वृद्धजीवन से तथा श्रीसीताराम भगवानजी के मर्यादा पुरुषोत्तम जीवन से उनकी शिक्षा से अपने जीवन में सुधार लाना परम-आवश्यक है। यह यज्ञानुष्ठान उसी दिशा का प्रेरक होगा। पूर्णिमा को ब्राह्मणों और अतिथियों को भोजन कराया गया। स्थानीय धार्मिक जनता का पूर्ण सहयोग रहा।

विनीत—यज्ञ समिति, सजवन, सलेमपुर (बिहार)

## इचलकरंजी (महा०) में २५ कुण्डीय यज्ञ एवं भागवत सप्ताह ज्ञान-यज्ञ सुसम्पन्न

औद्योगिक क्षेत्र इचलकरंजी में २३ अक्टूबर से श्रीमहालक्ष्मी यज्ञ एवं श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ विविध कार्यक्रमों के साथ २ नव० को सम्पन्न हुआ, विभिन्न प्रकार के कुण्डों एवं वेदियों के युक्त होने से यज्ञ मण्डप विशाल एवं शोभा सम्पन्न दृष्टिगोचर होता था एवं भागवत का मंच तथा मण्डप की एक अनोखी ही छटा थी, २३ अक्टूबर को १०८ कलशों से युक्त यज्ञ की शोभायात्रा विविध वाद्यों के साथ नगर के मुख्य मार्गों से निकाली गई एवं २४ अक्टूबर को श्रीभागवतजी की शोभायात्रा विविध वाद्यों के साथ निकाली गई। विशाल जन समुदाय था स्वामी श्रीमाधवाचार्यजी एक विशाल रथ पर विराजमान थे, यज्ञ में ५१ ब्राह्मण एवं श्रीभागवत में ११ ब्राह्मण वरणित थे, यज्ञ का कार्यक्रम प्रातः ८ बजे से १२ बजे तक मध्याह्न ३ से ६ बजे तक विविध पाठों हवनादि के साथ प्रतिदिन संपन्न होता था, एवं भागवत का कार्यक्रम प्रातः ८ से ९ बजे तक एवं सायं २॥ से ३ बजे तक युवराज स्वामी श्रीधराचार्य का प्रवचन होता था। प्रातः ९ से १२ बजे तक एवं मध्याह्न ३ से ६ बजे तक पू० ज० गु० रा० स्वामी माधवाचार्यजी अशर्फी भवन अयोध्या का प्रवचन होता था, स्वामीजी अपनी माधुर्यमयी वाणी से भरे पाण्डाल को अह्लादित कर देते थे, यज्ञ में आहूत जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी वासुदेवानन्दजी का प्रवचन रात्रि में ८ से १० बजे तक होता था कार्यक्रम में बाबारामदास का परिश्रम अच्छा रहा, यज्ञाचार्य राष्ट्रपति पुरस्कृत वयोवृद्ध प्राचार्य पं० ब्रजमोहनजी अजमेर थे, कार्यक्रमों को कैसेट के माध्यम से पूरे महाराष्ट्र को दूरदर्शन द्वारा दिखाया गया।

निवेदक—लक्ष्मीनिवास चाण्डक, अध्यक्ष—महालक्ष्मी यज्ञ समिति, इचलकरंजी

## विद्वान् स्वामी श्रीगोपालाचार्यजी का वैकुण्ठवास

हमारे पूज्य आचार्यचरण, विद्वन्मूर्धन्य-एवं शील-वयोवृद्ध टी० के० गोपालाचार्य स्वामीजी (नडिगड्डुपालेम् आन्ध्र प्रदेश) महाराज के स्वरूप-स्वभावों से आप चिर-परिचित हैं, साथ ही आचार्यश्री के परिपूर्ण वात्सल्यसौजन्य आदि के भी आप परिपूर्ण पात्र हैं। अब आगे महाराजश्री के प्रत्यक्षदर्शन से अस्मदादि शिष्यजन वञ्चित हो चुके हैं। श्रीवैकुण्ठ में नित्यसेवा के लिए प्रभु ने आपको वरण कर लिया। आप १०, १२ दिन आगे से अस्वस्थ थे। दिनाँक १७-१२-९६ धनुर्मास के चौथे दिन प्रातः ठीक ४ बजे श्रीवासुदासाश्रमम् नडिगड्डुपालेम् में लक्ष्मीनारायण भगवत्स्मरण करते हुए आप परमपद को प्राप्त हुए। अतः अस्वस्थ रहने पर भी भगवान् के ही सान्निध्य में शरीर विसर्जन का संकल्प आपने किया था। उस संकल्प को प्रभु ने सफल बना दिया। अस्पताल में जाने के लिए आप सहमत नहीं हुए थे। अस्वस्थता के कारण आध्यात्मिक प्रवचन को

महाराज के जीवन में मात्र १२—१४ दिन बन्द करना पड़ा। अस्वस्थावस्था में भी अन्तिम क्षण तक आपको भगवत्स्मृति अविच्छिन्न बनी रही। भगवद्रामानुजसिद्धान्तव्याप्ति के लिए पूज्यपाद त्रिदण्डी श्रीमन्नारायण रामानुज जीयर स्वामीजी के साथ आपने आसेतुशीताचल जो प्रचार किया था उसे विज्ञजन सुष्ठु जानते हैं। विशिष्टाद्वैत सिद्धांत के गूढार्थों को व्यक्त करते हुए तेलुगु भाषा में आपने कम से कम ७० ग्रन्थों की रचना की है। सब ग्रन्थ मुद्रित हैं, वर्तमान में उपलब्ध भी हैं। 'भक्तिनिवेदन' नामक आध्यात्मिक पत्रिका के आप सम्पादक रहे। समय-समय में अनेक पत्र-पत्रिकाओं में आपके उत्कृष्टलेख निकलते रहे भगवद्रामानुज सिद्धान्त प्रचार के लिए आपने श्रीभाष्य-भगवद्विषयादि ग्रन्थों को पढ़ाकर आपने प्रकाण्ड विद्वानों को तैयार किया है। उत्तर-भारत एवं नेपालके विद्वानोंको भी भगवद्विषयादि ग्रन्थोपदेशके माध्यमसे आपने महोपकार किया हैं। आप यतियों के भी आचार्य हैं। ऐसे ज्ञानानुष्ठानसम्पन्न आचार्यश्री का अन्तर्धान श्रीसम्प्रदाय के लिए अपूरणीय क्षति है। आपके सर्वगुणसम्पन्न (संस्कृत तेलुगु एम० ए०) एवं उभय वेदान्त विद्वान् पितृभक्त एकमात्र सुपुत्र हैं। चार सुपुत्रियां है। उनमें से ज्येष्ठपुत्री संस्कृत भाषा की विदुषी हैं। आचार्यश्री के वियोग में धैर्यधारण करने की क्षमता हमें प्रभु प्रदान करें। इस प्रार्थना के साथ-साथ श्रीचरणों में श्रद्धांजलि चढ़ाते हुए हम इस वक्तव्य को उपसंहार करते हैं।

प्रेषक—**श्रीकृष्णमाचार्य**, श्रीवासुदासाश्रमम्, नडिगड्डुपालेम् (आन्ध्रप्रदेश)

## अत्यावश्यक विज्ञप्ति

समस्त धार्मिक सज्जन महानुभाव विद्वानों को सूचित किया जा रहा है कि ग्रा० पो० मौलासर जिला—नागौर (राजस्थान) में 'श्रीसत्यनारायण संस्कृत विद्यालय' हेतु एक अनुभवी प्राध्यापक की आवश्यकता है। एतदर्थ संस्कृत विद्वान् अपना आवेदन पत्र 'श्रीसत्यनारायण ट्रस्ट, दूसरा माला, श्रीनिवास हाऊस, हजारीमल सोमानी रोड़, मुम्बई-४ इस पते पर प्रेषित करें।—**सम्पतकुमार सोमानी**

## श्रीभागवत मर्मज्ञ श्रीरामानुजाचार्यजी का वैकुण्ठवास

वृन्दावन, सेवाकुन्ज स्थित श्रीमद्भागवत उपासक, अजातशत्रु, परमप्रपन्न श्रीवैष्णव श्रीरामानुजाचार्यजी महाराज का वैकुण्ठवास मार्गशीर्ष मास शुक्लपक्ष उत्तरायण रवि, द्वादशी शनिवार तदनुसार दि० २२-१२-९६ को रात्रि १ बजे हो गया। आप वृन्दावन के धार्मिक सदाचार सच्चरित्र वरिष्ठ सन्त महापुरुष थे। आपने श्रीअखण्डानन्द सरस्वतीजी को निष्काम भाव से कई वर्षों तक सेवा की थी। आप पूज्यपाद अनन्तश्री श्रीत्रिदण्डी स्वामीजी महाराज बिहार के शिष्य यज्ञाचार्य श्री पं० रामदेवजी के कृपापात्र शिष्य थे। आपके वैकुण्ठगमन से वृन्दावन के विद्वानों और श्रीमद्भागवत के छात्रों में विशेष उदासी छायी है। श्रीठाकुरजी के पास जो कुछ भी है वह उनके आशीर्वाद का ही परिणाम है।

भगवान् श्रीगोदारंगनाथ से प्रार्थना है कि वे ऐसे दिव्यात्मा श्रीवैष्णव को अपना अन्तरङ्ग कैङ्कर्य प्रदान कर, उनके शिष्य परिवार को इस महान् शोक को सहन करने की क्षमता प्रदान करें। उनके चरणों में इन शब्दों का लेखक भी शब्दसुमनाञ्जलि अर्पित कर स्वयं को धन्य मानता है।

**श्रीरामानुजपदछायामाश्रितोऽजातशत्रुः । श्रीभागवतमर्मज्ञः शान्तोदान्तो गतक्लमः ॥**
**मार्गशीर्षे सितेपक्षे द्वादश्यामुत्तरायणे । रवौ; श्रीविरोधिनामाब्दे श्रीनिकुञ्जं समाश्रितः ॥**

विदुषां पादरेणुः—केशवदेव शास्त्री; वृन्दावन

## शोक-समाचार

ऐंठपुर—महेन्द्रनगर (नेपाल) निवासी विद्वान् श्रीवैष्णव श्रीचूड़ामणि शास्त्रीजी का हृदय आघात से दि० १० दिसम्बर ९६ को अकस्माद् वैकुण्ठवास हो गया। आपकी आयु ७१ वर्ष की थी। आपने विद्वान स्वामी श्रीनीलमेघाचार्यजी से अध्ययन किया था तथा श्रीमद्भागवतजी का अध्ययन पं० श्रीकन्हैयाला[illegible] शास्त्री, वृन्दावन से किया था। आप भरे-पूरे ढकाल परिवार को विलखता छोड़ गये हैं। श्रीभगवान् अपनी निर्हेतुक कृपा से श्रीशास्त्रीजी को अपना चरण सान्निध्य तथा समस्त परिवारीजनों को धैर्य प्रदान करें।

भागवत, हयग्रीवढ़काल (पुत्र), श्रीवेङ्कटेश-प्रेस, ऐंठपुर, महेन्द्रनगर (नेपाल) —सम्पादक

## अनभ्रवज्रपात

बड़े खेद के साथ वैष्णव जगत को सूचित करना पड़ रहा है कि श्रीसुकदेवाचार्य जीयर स्वामी श्रीवेणुगोपाल मन्दिर वृद्ध खैरा, पो० मुरमाकला, पलामू का अकस्मात निधन दि० १६।११।९६ शनिवार को हो गया। इस अनभ्रवज्रपात की सूचना वायरलेस से जगदाचार्य त्रिदण्डी स्वामीजी महाराज को गोह, औरंगाबाद (बिहार) में दी गई। उन्होंने तुरन्त गया के स्वामीजी महाराज को भेजा। स्वामीजी ने शास्त्रीय विधि से समाधि दिलाई। उनके अन्तिम दर्शन के लिए अपार जनसमूह एकत्रित हुआ।

निवेदक—**देवराज रामानुज श्रीवैष्णवदास**
व्यवस्थापक—**श्रीवेणुगोपाल मन्दिर (पलामू)**

भायन्दर (थाणे) महाराष्ट्र में

# श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण

## ज्ञानयज्ञ का भव्य आयोजन

(दिनाँक १० जनवरी १९९७ से बम्बई में प्रारम्भ)

समस्त धार्मिक जगत को सूचित करते हुए परम हर्ष होता है कि श्रीवेंकटेश भगवान की महान् कृपा से श्रीमद् प्रतिवादि भयंकर मठाधीश्वर अनन्तश्री विभूषित ज०गु० स्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज के सान्निध्य में दि० १० जनवरी १९९७ से २० जनवरी १९९७ तक मुम्बई के उपनगर भायन्दर में श्रीमद्भागवत सप्ताह पारायण ज्ञानयज्ञ का भव्य आयोजन भक्तजनों के अनुरोध से सार्वजनिक रूप से किया जा रहा है।

व्यासपीठ पर अयोध्या कौशलेश सदन पीठाधीश्वर श्रीमद्भागवत महापुराण के विशिष्ट विद्वान् वक्ता एवं भारत प्रसिद्ध युवा सन्त श्रीश्री १००८ श्रीवासुदेवाचार्य जी 'विद्याभास्कर' स्वामीजी महाराज विराजमान होकर अपनी विशिष्ट विद्वत्तापूर्ण सरस शैली में श्रीकृष्ण कथा का प्रवचन करेंगे।

यह आयोजन भायन्दर के समस्त उदार धर्मप्रेमी महानुभा[illegible] से सम्पन्न हो रहा है। अतः समस्त धार्मिक जगत अधिक [illegible] उपस्थित होकर इस दिव्य अवसर का लाभ उठावे और अप[illegible] सफल बनायें।

कथा समय—प्रातः ९ से १२ बजे तक ❋ अपराह्न [illegible]

विनी[illegible]

कथा स्थल—

**श्रीराम भवन**

भायन्दर (पश्चिम) मुम्बई

**श्रीमद् भागवत सप्ता[illegible]**

भायन्दर (थाणे) मुम्बई

रजि० न० एम० टी० आर० 200

# अनन्त-सन्देश के उद्देश्य

सर्वसाधारण भगवत्प्रेमानुरागियों को प्रभु प्रेम-रसामृतपान कराकर मानव समाज को पूर्ण सुख शान्ति प्रदान करते हुए ईश्वरोन्मुख होने में उत्पन्न भ्रम, विवाद एवं परस्पर द्वेष को समूल नष्ट करना और भगवत्प्रेम के दिव्य आदेश को उपस्थित करना साथ ही पूज्य श्रीकांची प्र० भ० अनन्त श्रीविभूषित श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज के सदुपदेशों का प्रचार-प्रसार व श्रीवैष्णव सम्प्रदाय की वृद्धि इस मासिक-पत्र का उद्देश्य है।

## नियम—यह पत्र शुद्ध पारमार्थिक पथ का पथिक है।

### व्यवस्था सम्बन्धी—

१—पत्र प्रत्येक माह की २७ तारीख को प्रकाशित होगा। किसी कारणवश देर भी हो सकती है।

२—इस पत्र की वार्षिक भेंट ... में ३०)रु० होगी, २५)रु० नहीं।

३—जो सज्जन इसको ए... )रु० भेंट प्रदान करेंगे वे पत्र के ... दस्य होंगे, वह पत्र उन्हें आजीव... ।

४—... मास की ... कि पत्र प्राप्त ... पत्र लिखकर ... नहीं भेजा ... ज दिया ...

### सम्पादक सम्बन्धी—

१—इस पत्र में भगवत्... सम्बन्धी, ज्ञान, भक्ति प्रपत्ति के ... लेख एवं कवितायें ही प्रकाशित हो सकेंगी।

२—... स्पष्टतया कागज के एक ओर लिखकर ...

३—लेखों के घटाने-बढ़ाने, छापने न छापने आदि का पूर्ण अधिकार सम्पादक को होगा।

४—लेख, कविता तथा सम्बन्धित पत्र सम्पादक अनन्त-सन्देश, वृन्दावन (उ. प्र.) के पते पर भेजना चाहिए जो माह की १० तारीख तक मिल सकें।

५—विवादास्पद एवं अधूरे लेख स्वीकृत न होंगे

६—किसी लेखक के मत के उत्तरदायी सम्पादक नहीं होंगे।

७—सम्पादक सम्बन्धी समस्त लिखा-पढ़ी निम्न पते पर करनी चाहिए।

आध... आपने ... पं० श्रीकन्हैया... छोड़ गये हैं। श्रीभगव... परिवारीजनों को धै... भागवत, हयग्रीवढ़काल ...

... पत्र व्यवहा... न चे...

बड़े खेद के साथ वैष्णव स्वामी ... मन्दिर वृद्ध शनिव... अन... महा... भेज... एक...

—पत्र व्यवहार के पते—

१—व्यवस्थापक—

**श्रीवेङ्कटेश देवस्थान**

६०/६४ फणसवाड़ी, बम्बई—२

२—सम्पादक—

**श्रीरङ्गनाथ प्रेस**

वृन्दावन (मथुरा) उ. प्र., फोन : ४४२१३१

मालिक श्रीवेङ्कटेश देवस्थान ६०/६४ फणसवाड़ी बम्बई—२ ने सम्पादक ... ङ्गनाथ प्रेस, ... वृन्दावन से छपवाकर प्रकाशित किया।